

- स्पष्ट है कि हरित गृह प्रभाव तथा उसके परिणामस्वरूप वैश्विक ताप वृद्धि विश्व के समक्ष एक बड़ा खतरा और साथ ही एक चुनौती भी है। पृथ्वी पर ग्लोबल वार्मिंग बढ़ाने के संबंध में यद्यपि धनी और विकसित देशों द्वारा विकासशील देशों को इसके लिए जिम्मेदार बताया जाता रहा है लेकिन वास्तविकता इससे बिल्कुल अलग है। भारत में “टाटा एलर्जी रिसर्च इन्स्टीट्यूट” के महानिदेशक के अनुसार अमेरिका वातावरण में ग्रीन हाऊस गैसों का सर्वाधिक उत्सर्जन कर रहा है। भारत की इसमें हिस्सेदारी मात्र 2 प्रतिशत है जबकि अमेरिका की 31 प्रतिशत है।
- **ग्लोबल वार्मिंग रोकने के उपाय (Measures to Control Global Warming):** (i) वनों की कटाई (Deforestation) पर कानूनी प्रतिबंध लगा देना चाहिए तथा वनों का विकास करना चाहिए।
- खाली पड़ी वन भूमि एवं शहरों के आसपास अधिक-से-अधिक संख्या में वृक्षारोपण करना चाहिए। इससे पौधों के द्वारा वातावरण में उपस्थित CO_2 का अधिकाधिक उपयोग प्रकाश-संश्लेषण क्रिया में हो जायेगा तथा CO_2 की सान्द्रता में कमी आने पर हरित गृह प्रभाव में कमी आयेगी।
- लोगो को जलवायु में होने वाले परिवर्तनों की जानकारी होना चाहिए। ताकि वे इनके कुप्रभावों से बचने के उपायों पर ध्यान दें। कारखानों (Factories) एवं ऑटोमोबाइल्स (Automobiles) के द्वारा खतरनाक गैसों जैसे- CO_2 एवं CFC के उत्सर्जन (Emission) पर पाबंदी लगा देना चाहिए।
- जीवाश्म ईंधनों (Fossil Fuels) जैसे कोयला एवं पेट्रोलियम के उपयोग में कमी लाना चाहिए। इन जीवाश्म ईंधनों के उपयोग में कमी लाने के लिए ऊर्जा के अपरंपरागत एवं नवीनीकरण योग्य स्रोतों जैसे- वायु (Wind), सौर, ऊर्जा, नाभिकीय ऊर्जा आदि का अधिक उपयोग किया जाना चाहिए।
- **अम्लीय वर्षा (Acid Rain):** अम्लीय वर्षा या तेजाबी वर्षा की खोज सर्वप्रथम 1852 में रॉबर्ट स्मिथ ने की थी। अम्लीय वर्षा से तात्पर्य वर्षा के पानी में अम्ल की बहुलता है। जब वातावरण की नमी के संपर्क में SO_2 (सल्फर डाइऑक्साइड) व NO_2 (नाइट्रोजन डाइऑक्साइड) गैसें आती हैं तो सल्फ्यूरिक अम्ल (H_2SO_4) व नाइट्रिक अम्ल (HNO_3) बनाती हैं। ये अम्ल ही वायुमंडल के संपर्क में आकर वर्षा के पानी को अम्लीय बनाते हैं। मुख्यतया तीन प्रकार के अम्ल अम्लीय वर्षा में होते हैं:-
 1. सल्फर डाइऑक्साइड से गंधक का तेजाब (Sulphuric Acid),
 2. नाइट्रोजन डाइऑक्साइड से शोरे को तेजाब (Nitric Acid),
 3. कार्बन डाइऑक्साइड से कार्बोनिक एसिड (Carbonic Acid)
- **अम्लीय वर्षा से हानि (Damages due to acid raon):** अम्लीय वर्षा से होने वाली हानियां निम्न हैं।
 - अम्लीय वर्षा से पेड़ों की पत्तियों जल जाती है। ऊपरी सिरे नष्ट होने लगते हैं। और तने कमजोर होते हैं। और तने कमजोर होते जाते हैं जिससे पेड़ जल्दी गिर भी जाते हैं। और नष्ट भी होने लगते हैं।
 - अम्लीय वर्षा अपने साथ लायी मिट्टी को नदियों और झीलों में डाल देती है। तथा उनके जल की अम्लीयता बढ़ जाती है।
 - जब अम्लीय वर्षा का जल तालाबों झीलों आदि में मिल जाता है। तो जल में रहने वाले जीव प्रभावित होते हैं। पानी के अंदर रहने वाले जीव जैसे मछलियां 5.5 पी. एच. पर ही मर जाती हैं।
 - इमारती सामग्री (चूना, पत्थर, संगमरमर, मोटर और स्लेट) आदि भी अम्ल वर्षा के द्वारा बुरी तरह से प्रभावित होते हैं। अम्लता के कारण इन पदार्थों के जल में घुलनशील सल्फेट बनते हैं जो उनसे आसानी से अलग हो जाते हैं।
 - अम्ल वर्षा से सर्वाधिक प्रभावित देशों में क्रमशः स्वीडन, नार्वे और अमेरिका हैं। अब तक सबसे भीषण अम्ल वर्षा अमेरिका के वर्जीनिया प्रांत में हुई है जहां पर संपूर्ण वन लगभग नष्ट होने गये हैं।
 - भारत में कम से कम वर्तमान समय में अम्ल की समस्या विकराल नहीं हो पायी है। (BARC (Bhabha Atomoc

Research Corporation तथा WMO (World Meteorological Organization) द्वारा किये गये अध्ययनों से ज्ञान हुआ है कि अधिकांश भारतीय नगरों में वर्षा के जल में अम्लता का स्तर अभी सुरक्षा सीमा से कम ही है।

- अम्ल वर्षा के नियंत्रण के उपाय : यद्यपि इस समस्या को पूरी तरह से हल तो नहीं किया जा सकता, पर फिर भी कुछ उपाय इसे कम करने के किये जा सकते हैं।
- कारों में Catalytic Converter लगाये जायें।
- पानी और मिट्टी में चूने का उपयोग करें जिससे उनकी अम्लीयता कम हो सके।
- ऐसे ऊर्जा के स्रोतों का उपयोग कम करें जिससे SO_2 या NO_2 का उत्सर्जन अधिक होता है।
- द्विपहिया वाहनों का उपयोग कम किया जाये।
- उद्योगों के स्क्रबर्स (Scrubbers) के उपयोग से उत्सर्जित होने वाली SO_2 गैस को स्रोत पर ही रोक लिया जाये।
- **ओजोन परत का क्षरण (Ozone Layer Depletion) :** ओजोन परत के विरल होने अथवा उसमें छिद्र होने की चर्चा आज विश्व भर में चिन्ता का विषय है। इसे पृथ्वी की 'रक्षा कवच' भी कहते हैं। ओजोन O_3 एक ऐसी गैस है जो ऑक्सीजन के 3 परमाणुओं से बनी है। जबकि साधारण ऑक्सीजन दो परमाणुओं से बनी होती है। पृथ्वी के धरातल से 20-30 किलोमीटर की ऊंचाई पर वायुमंडल के समताप मंडल में ओजोन गैस का ओजोन परत या ओजोन मंडल कहते हैं। ओजोन गैस की यह पतली पट्टिका पर्यावरण की रक्षक है क्योंकि यह पृथ्वी के जीव-जन्तुओं एवं वनस्पतियों के लिए हानिकारक पराबैंगनी किरणों De (Ultraviolet Rays) को अवशोषित कर रक्षा कवच का काम करती है।
- विगत वर्षा से औद्योगिक गतिविधियों के कारण वायुमंडल ओजोन क्षयकारी पदार्थों Ozone Depleting Substances (ODS), जैसे- क्लोरो-फ्लोरो कार्बन (C.F.C) नाइट्रिक ऑक्साइड, टैलोस, मेथिल, ब्रोमाइड इत्यादि की मात्रा बढ़ी है जिससे ओजोन परत के क्षरण में तेजी से आयी है। ओजोन परत की मोटाई मापने की इकाई 230 डाबसन होती है। ओ. डी. एस. के बढ़ते प्रभाव के कारण कुछ

स्थलों पर ओजोन परत की मोटाई बहुत कम हो गयी है जिसको ओजोन छिद्र (Ozone Hole) की संज्ञा दी गयी है।

- ऐसा छिद्र सर्वप्रथम फारमन ने सन् 1985 में अंटार्कटिका के ऊपर देखा था। अब धीरे-धीरे उत्तरी ध्रुव कनाडा, अमेरिका आदि पर भी ओजोन छिद्र बनने लगे हैं ओजोन मंडल के लिए सर्वाधिक घातक क्लोरो फ्लोरो कार्बन (CFC) है। CFC प्रशीतन के उपकरणों में प्रयोग में लाया जाता है। जब CFC वायुमंडल में मुक्त होता है। तो सीधे वायुमंडल की ऊपरी परत पर पहुँच जाता है। सूर्य की पराबैंगनी किरणें CFC को तोड़ देती हैं। प्रकार प्रकार पृथक्-हुई क्लोरीन (Cl_2) O_3 से क्रिया कर O_2 स्वयं को सूर्य की पराबैंगनी किरणों से रक्षा नहीं कर सकती। दूसरे इस प्रक्रिया से O_3 के हजारों अणु टूटते हैं और ओजोन मंडल नष्ट होता है।

- ओजोन मंडल को हानि पहुँचाने वाले अन्य कारकों में वनों का विनाश परमाणु बमों का विस्फोट अंतरिक्ष अनुसंधान भी उल्लेखनीय है। विश्व में CFC गैसों के उत्सर्जित करने में अमरीका सबसे आगे है। ओजोन क्षरण के कारण पृथ्वी पर अत्यधिक मात्रा में पहुँचने वाली पराबैंगनी किरणों समस्त जीवन जगत के लिए कई प्रकार के हानिकारक सिद्ध होती है। इसके कारण मनुष्य को त्वचा के कैंसर और आंखों की बीमारियों का खतरा बढ़ता है। मनुष्य की रोगों से लड़ने की क्षमता कम होती है और शिशुओं में डी. एन. ए में अवांछित विकास से विकलांगता भी प्रकट हो सकती है। इसके अतिरिक्त पराबैंगनी किरणें वनस्पति जगत को भी प्रभावित करती है। इससे पत्तियों को जिनका छिछले पानी में उगने वाली घास मुख्य खाद्य स्रोत है, की पैदावार में कमी आती है। पराबैंगनी किरणों से जलचारों को जिनका छिछले पानी में उगने वाली घास मुख्य खाद्य स्रोत है, से नष्ट हो सकता व धूप में रहने वाली वस्तुओं जैसे- धातु की पाइप, फर्नीचर आदि के शीघ्र खराब होने की संभावनाएं बढ़ जाती है। इस संबंध में वर्तमान में किये गये शोध परिणाम इंगित करते हैं कि ओजोन क्षरण के दुष्प्रभाव काफी भयानक और विश्वव्यापी होंगे अर्थात् यह पृथ्वी के किसी एक भाग में अथवा कुछ देशों में सीमित रहकर बहुत बड़े भाग तक दिखायी देंगे और यह भी निश्चित है

कि पृथ्वी के कुछ भागों पर तो इसका सीधा असर पड़ेगा। वर्तमान में ऑस्ट्रेलिया न्यूजीलैंड, दक्षिण अफ्रीका व दक्षिण अमेरिका के कुछ भाग ओजोन क्षरण से अधिक प्रभावित क्षेत्र हैं और अंटार्कटिका अपने अद्भुत मौसम के कारण और भी अधिक प्रभावित होता है।

- ओजोन क्षरण की यह समस्या किसी एक देश की समस्या नहीं बल्कि यह तो संपूर्ण मानव जाति की समस्या है। यदि हम इस समस्या से छुटकारा पाना चाहते हैं। तो हमें एकजुट होकर इस समस्या का मुकाबला करना होगा। ऐसे सभी कारणों को दूर करना होगा है। जिससे हमारे वायुमंडल की ओजोन रूपी छतरी को खतरा पैदा रहा है।
- **धुएं-कुहरा या स्मॉग (Smog):** यह वस्तु SMOGUE का अपभ्रंश है- SMOKE FOGUE (धुआं+कुहरा) या यों कहें कि स्मॉग एक धुएं विषैली गैसों वायु में तैरते हैं अनेक तत्व व कार्बन के कण और पानी की भाप की मिली-जुली वह एक पर्त है जो पृथ्वी से कुछ ऊंचाई पर वायुमंडल में एक आवरण सा बनाकर कुछ आवासीय भागों को ढक लेती है। सरल शब्दों में नगरों एवं औद्योगिक क्षेत्रों के ऊपर धुएं से युक्त कुहरे को सामान्यतया धूम कुहरा या नगरी धूम कुहरा कहते हैं। जब असाधारण कुहरे के साथ धुएं का मिश्रण हो जाता है तो धूम कुहरे का निर्माण होता है।
- **दुष्प्रभाव:** जब धूम-कुहरे के साथ वायु के प्रदूषकों यथा-सल्फर डाइआक्साइड नाइट्रोजन के ऑक्साइड तथा ओजोन का मिश्रण हो जाता है तो वह मानव वर्ग के लिए विषाक्त एवं प्राणघातक हो जाता है। विषाक्त धूम कुहरे के निर्माण में सबसे अधिक दोषी तत्व सल्फर डाइआक्साइड है क्योंकि इसकी निलंबित कणिकीय पदार्थों पर स्थित जल के साथ अभिक्रिया होने से सल्फ्यूरिक एसिड (H_2SO_4) का निर्माण होता है। जब सल्फ्यूरिक एसिड का धूम-कुहरे से संपर्क हो जाता है। तो वह विषाक्त एवं घातक हो जाता है।
- **स्मॉग:** यह विषैला धुआं श्वसन क्रिया को बुरी तरह प्रभावित करता है। दम घुटने लगता है। और यदि व्यक्ति काफी लंबी अवधि तक इसमें फंसे जायें तो वह मर भी सकता है। अस्थमा के रोगी को तो यह कुछ मिनट भी

सहन नहीं है। दिसम्बर सन् 1952 में लंदन महानगर के ऊपर विषाक्त एवं प्रदूषित घने धूम-कुहरे का निर्माण होने से 4,000 लोग मर गये थे।

- **संभावित समाधान (Possible Solution):** स्मॉग कम से कम बने या बिलकुल न बनें, यहीं इसका उत्तम और अंतिम उपाय है पर फिर भी वह स्थिति कैसे आवे, इस हेतु कुछ सुझाव प्रस्तुत है।
- स्वचालित वाहनों के कम उपयोग से उत्सर्जित धुएं की मात्रा में कमी आयेगी। सामूहिक बस अथवा बाइसिकिल काम में लें।
- कम धुएं वाले ईंधन का प्रयोग करें। खाना बनाने के लिए LPG या CNG गैस का उपयोग हो तो उत्तम है।
- कारों में गैस का उपयोग करें वैसे अब नये मॉडलों में इस उपकरण की आवश्यकता नहीं।
- द्विपहिया वाहन में ट्यूनिंग ठीक रखें। इससे उत्सर्जन की मात्रा कम होगी तथा धुआं कम निकलेगा।
- वृहद् पैमाने पर वृक्षारोपण करके उनकी सुरक्षा करनी चाहिए।

ध्वनि प्रदूषण

- किसी भी वस्तु से जनित सामान्य आवाज को ध्वनि (Sound) कहते हैं। जब ध्वनि की तीव्रता अधिक हो जाती है। तथा जब कानों को प्रिय (कर्णप्रिय) नहीं लगती है। उसे शोर (Norse) कहते हैं अर्थात् अधिक ऊंची ध्वनि या आवाज को शोर कहते हैं। इस प्रकार उच्च तीव्रता वाली ध्वनि, अर्थात् अवांछित शोर के कारण मानव वर्ग में उत्पन्न अशांति एक बेचैनी की दशा को ध्वनि प्रदूषण कहते हैं स्पष्ट है कि आवाज ध्वनि प्रदूषण का प्रमुख प्रदूषण (Pollutant) है।

ध्वनि प्रदूषण के स्रोत (Sources of Voice Pollution)

- सामान्य तौर पर ध्वनि प्रदूषक के स्रोतों को तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है:
 1. **प्राकृतिक स्रोत**, जैसे- बादलों की गरज तथा गड़गड़ाहट उच्च वेग वाली वायु के विभिन्न रूप जैसे- हरीकेन, झंझावात (गेल), टारनैडी आदि उच्च तीव्रता वाली जल वर्षा जल प्रपात सागरीय सिर्फ तरंगें आदि।

2. **जीवीय स्रोत**, जैसे- जंगली एवं पालतू जानवरों की विभिन्न तीव्रता वाली आवाज, जैसे- सरकस के कटघरे में शेर की दहाड़ तथा हाथियों की चिंघाड़ आवाज, कुत्तों को भौकना, मनुष्य भी हंसते-अट्टहास करते, रोते-चिल्लाते गाते तथा लड़ते-झगड़ते समय विभिन्न प्रकार के शोर उत्पन्न करता है।
3. **कृत्रिम स्रोत** जैसे- मनुष्य के विभिन्न कार्यों के समय उत्पन्न शोर तथा मनुष्य द्वारा निर्मित विभिन्न उपकरणों के कार्यरत होने पर उत्पन्न शोर, जैसे-
 - सड़क पर चलने वाले वाहन स्कूटर, कार, बस, ट्रक आदि शोर के प्रमुख कारण हैं।
 - ध्वनि के वेग से चलने वाले वायुयान (सुपरसोनिक) प्लेन उड़ान भरने समय और उतरते समय सामान्य वायुयानों की तुलना में अधिक कर्कश ध्वनि पैदा करते हैं।
 - हवाई जहाज और जेट विमानों के उड़ान भरने समय और उतरते समय तेज आवाजें पैदा होती हैं।
 - गली-मोहल्लों में फेरी वाले लोग, ठेलियों पर फल-सब्जियों तथा दूसरी वस्तुएं बेचने वाले लोग कबाड़िया आदि सारे दिन तरह-तरह की आवाजें पैदा करते हैं। इससे समाज में शोर प्रदूषण पैदा होता है।
 - पटाखों से निकलने वाली आवाज से शोर और वायु प्रदूषण होता है। सिर चकरा जाता है।
 - विस्फोटक हथियार, जैसे-बंदूक, राइफल, मशीन गन तथा भाँति-भाँति के बमों से पैदा होने वाली ध्वनियाँ काफी तीव्र होती हैं।
- ध्वनि प्रदूषण के कारण सिर दर्द, थकान, अनिद्रा आदि रोग होते हैं।
- शोर के कारण हृदय की धड़कन (Heart Beating) तथा रक्त दाब (Blood Pressure) बढ़ता है।
- शोर का तनाव से सीधा संबंध है और अधिक तनाव से हृदय रोगों का जन्म होता है।
- शोर प्रदूषण से लैंगिक नपुंसकता (Infertility) भी पैदा हो सकती है।
- शोर के कारण हमारे शरीर का पूरा अंतःस्रावी तंत्र (Endocrine System) उत्तेजित हो जाता है।
- ध्वनि प्रदूषण के कारण धमनियाँ में कोलेस्ट्रॉल का जमाव बढ़ता है जिसके परिणामस्वरूप रक्तचाप (Blood Pressure) भी बढ़ता है।
- तीव्र शोर के कारण हमारा पाचन तंत्र (Digestive System) प्रभावित होता है और पाचन (Digestion) क्रिया अनियमित हो जाती है। शोर के कारण अल्सर (Uleer) की संभावना भी बढ़ती है।
- अवांछित ध्वनि (शोर) के कारण मस्तिष्क का तनाव बढ़ता है जिससे व्यक्ति चिड़चिड़ा हो जाता है।
- सुपर सोनिक विमानों से पैदा होने वाले सोनिक बूम काफी हानिप्रद होता है। सोनिक बूम लगभग 50 मील चौड़ा होता है। वास्तव में यह प्रघाती तरंग होती है जिसके दाब का कानों पर बुरा असर पड़ता है। इससे खिड़कियों के शीशे तक टूट जाते हैं और कानों में विचित्र अनुभूति होती है।

ध्वनि प्रदूषण का नियंत्रण (Control of Voice Pollution)

- ध्वनि प्रदूषण को पूरी तरह से समाप्त कर देना संभव नहीं है। लेकिन निम्नलिखित उपायों के द्वारा हम इसे कम अवश्य कर सकते हैं।
 - कारखानों तथा उद्योगों में शोर शोषक दीवारों (Noise Absorbing Wall) का निर्माण करना चाहिए। यंत्रों तथा उपकरणों की बियरिंग में मफलरों का प्रयोग करना चाहिए।
 - शोर से बचाने के लिए कल-कारखानों को सामान्यतः नगर तथा कस्बों से दूर स्थापित करना चाहिए।
 - पौधों में ध्वनि प्रदूषण को कम करने की अत्यधिक क्षमता होती है। अतः जिन संस्थानों में शोर अधिक होता है, उनकी परिधि में वृक्ष लगाये जाने चाहिए।
- वैज्ञानिक शोधों से स्पष्ट है कि 90 डेसीबल से ऊपर की ध्वनि के प्रभाव में लंबे समय तक रहने वाला व्यक्ति बहरा हो जाता है। और 130-140 डेसीबल का शोर शारीरिक दर्द उत्पन्न कर देता है।
 - ज्यादा शोर होने पर त्वचा में उत्तेजना (Irritatin) पैदा होते हैं। जठर पेशियाँ (Gastric Muscles) संकीर्ण होती हैं और क्रोध तथा स्वभाव में उत्तेजना पैदा करती हैं।
 - अधिक शोर के कारण ऐड्रीनल हार्मोन (Adrenal Hormones) का स्त्रोव अधिक होता है।

- शोर करने वाले वाहनों पर प्रतिबंध लगाना चाहिए। जापान में लाउडस्पीकर के प्रयोग पूर्णतः प्रतिबंध है और इसका प्रयोग करने से पूर्व सरकार से इसकी अनुमति लेनी पड़ती है। जबकि हमारे देश में लोग कभी भी लाउडस्पीकर पूरी आवाज से बजा सकते हैं।
- ऐसी मशीनों जिनका शोर कम करना संभव न हो, के साथ काम करने वाले व्यक्तियों को ध्वनि अवशोषक वस्त्रों, कर्ण बन्दकों (Earmuffs) का प्रयोग करना चाहिए।
- कल-कारखानों में काम करने वाले व्यक्तियों के समय-समय पर श्रवण शक्ति की जांच करानी चाहिए।
- कल-कारखानों में कम ध्वनि का साइरन बजाना चाहिए। लाउडस्पीकर एवं बैंड बाजों पर प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए कि वे व्यर्थ न बजायें जो दुकान वाले प्रदर्शन हेतु परीक्षण करते हैं, कम करें।
- हवाई अड्डों, रॉकेटों तथा यानों के शोर को नियंत्रित करना चाहिए। जापान में ध्वनि प्रदूषण को कम करने के लिए टोकियो शहर के अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे पर जहाजों का आवागमन रात्रि 10.00 बजे से प्रातः 4.00 बजे तक बंद रहता है।
- हॉर्नों को आवश्यकता से अधिक नहीं बजाना चाहिए। जापान में स्वचालित वाहनों द्वारा सामान्य दशाओं में हॉर्न बजाने पर पूर्णतः प्रतिबंध लगा हुआ है।
- ध्वनि प्रदूषण को रोकने हेतु वैधानिक प्रयास में कड़ाई लायी जायें।
- जनसाधारण के ध्वनि प्रदूषण से उत्पन्न खतरों से अवगत कराया जाये, ताकि प्रत्येक व्यक्ति अपने स्तर से शोर कम करने में सकारात्मक भूमिका निभा सके।
- **फैक्ट्री अधिनियम, 1988 (धारा 89, 90):** ध्वनि प्रदूषण से श्रमिकों को हुए नुकसान की जांच में लापरवाही दंडनीय अपराध।
- **वायु, प्रदूषण नियंत्रण (अधिनियम, 1981):** ध्वनि प्रदूषण को वायु प्रदूषकों की श्रेणी में शामिल करते हुए दंडनीय अपराध।
- **पर्यावरण संरक्षण (अधिनियम, 1986):** ध्वनि प्रदूषण पर सरकार को नियंत्रण की शक्ति दंडनीय अपराध।
- **वाहन अधिनियम, 1988 :** गाड़ी के हॉर्न और साइलेंसर का सही हालत में न होना और बी. आई. एस. के मानकों में अधिक ध्वनि करना।
- **व्यक्तिगत अपराध कानून:** ध्वनि प्रदूषण को अपराध श्रेणी में रखते हुए नागरिकों को मुकदमा दायर करने का अधिकार दिया गया है।

नाभिकीय प्रदूषण

नाभिकीय ऊर्जा परमाणु के केन्द्रक (nucleus) की ऊर्जा है। केन्द्रकों में परिवर्तन होने से भारी मात्रा में ऊर्जा अवमुक्त होती है। केन्द्रकों से दो विधियों द्वारा ऊर्जा उत्पन्न की जाती है—

1. नाभिकीय विखण्डन (Nuclear Fission)
2. नाभिकीय संलयन (Nuclear Fusion)

- एक परमाणु केन्द्रक का अतिसूक्ष्म टुकड़ों में टूटना 'नाभिकीय विखण्डन' है जबकि परमाणु केन्द्रकों की संयुक्तियों (combination) द्वारा भारी केन्द्रों का निर्माण होना 'नाभिकीय संलयन' है। इन दोनों ही क्रियाओं के सहउत्पाद के रूप में ऊर्जा विसर्जित होती है जो आस-पास की सभी वस्तुओं को नष्ट कर देती है।
- रेडियोधर्मी तत्व स्वयं विकिरण करते रहते हैं, जिससे इसके केन्द्रक में परिवर्तन की प्रक्रिया चली रहती है। इसे रेडियोधर्मीक्षरण (radioactive decay) कहा जाता है। रेडियोधर्मी तत्वों के क्षरण तथा विघटन से जो प्रदूषण उत्पन्न होता है वह न तो दिखाई देता है और न ही उसमें कोई गंध होती है लेकिन इसके अनेक घातक प्रभाव होते हैं।

भारत में ध्वनि प्रदूषण नियंत्रण के प्रावधान

- **भारतीय दंड संहिता (धारा 268, 290 और 291):** ध्वनि उत्पात से जनता को क्षति और स्वास्थ्य को खतरा तथा परेशानी पहुंचाना।
- **दंड प्रक्रिया संहिता (धारा 133):** इस ध्वनि उत्पाद को वैध ठहराने वाला कोई भी वाहन स्वीकार्य नहीं है। दंडनीय अपराध।

नाभिकीय प्रदूषण के कारण एवं प्रभाव (Causes and Effects of Nuclear Pollution)

नाभिकीय प्रदूषण दो कारणों से हो सकते हैं-

1. प्राकृतिक (Natural)
 2. मानवजन्य (Man Made)
- प्रकृति में यूरेनियम और थोरियम अधिकता में पाए जाने वाले रेडियोधर्मी तत्व हैं जो विभिन्न चट्टानों, मिट्टी, नदी, समुद्रीजल तथा अयस्कों (ores) में विद्यमान रहते हैं। सूर्य की किरणें तथा भू-सतह में पाए जाने वाले रेडियो एक्टिव तत्वों को आन्तरिक विकिरण नाभिकीय प्रदूषण के प्राकृतिक स्रोत हैं। इसके साथ ही यूरेनियम और थोरियम के उत्खनन के समय भी नाभिकीय प्रदूषण होता है।
 - नाभिकीय परीक्षण, नाभिकीय ऊर्जा संयंत्र, रेडियो एक्टिव अयस्कों का शोधन संयंत्र, रेडियोधर्मी पदार्थों का उद्योग-चिकित्सा तथा अनुसंधान में उपयोग, रेडियोधर्मी जमाव आदि विकिरण एवं नाभिकीय प्रदूषण के मानव जन्य स्रोत हैं। परमाणु बमों के विस्फोट के समय उनकी 15 प्रतिशत ऊर्जा रेडियोधर्मिता के रूप में उत्सर्जित होती है जिसका रेडियोधर्मी अवपातन होता है और वह पृथ्वी पर गिरकर मिट्टी, जल तथा वनस्पतियों के साथ मिल जाती है। न्यूक्लियर रिएक्टरों से नाभिकीय ईंधन संचालन के समय भारी मात्रा में लम्बी आयु के रेडियोधर्मी अपशिष्ट उत्सर्जित होते हैं।
 - यह नाभिकीय प्रदूषण केवल मानव स्वास्थ्य पर ही नहीं बल्कि भूमि, जल, वायु, वनस्पति और आगामी पीढ़ियों पर भी दुष्प्रभाव डालता है। इसके प्रभाव क्षेत्र में आने से कैंसर उत्पन्न हो सकता है। रेडियोधर्मी प्रदूषणों से त्वचा जल जाती है। बाँझपन और अपंगता इन प्रदूषण के भयानक दुष्परिणाम हैं। रेडियोधर्मी विकिरण डी.एन.ए. की अनियमितताओं को भी जन्म देता है। तीव्र विकिरण से बालों का झड़ना, मुँख एवं मसूड़ों से रक्त स्राव, रक्ताल्पता, ल्यूकेमिया आदि दोग होते हैं। जीन्स (गुण सूत्रों) से सम्बन्धित अनियमितताओं के कारण गर्मस्थ शिशु की मृत्यु, नवजात शिशु की मृत्यु अथवा आगामी पीढ़ियों में जन्मजात विकृतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं। रेडियोधर्मी अवपातन (fallout) के कारण रेडियोधर्मी अपशिष्ट पृथ्वी पर गिरकर भूमि, जल तथा वनस्पतियों पर दुष्प्रभाव डालते

हैं। भूमि की उर्वरा शक्ति नष्ट हो जाती है। रेडियोधर्मी अपशिष्टों के विसर्जन से विकिरण की विभिन्न मात्राएँ पर्यावरण में प्रवेश करती जाती हैं जो सभी जीवों के लिए हानिकारक हैं।

- नाभिकीय प्रदूषण का भयावह परिणाम जापान के हिरोशिमा और नागासाकी नगरों पर जो पड़ा है उससे हम सभी भिन्न हैं।

चेर्नोबिल नाभिकीय विस्फोट

- मानव सभ्यता के इतिहास में सबसे बुरी नाभिकीय आपदाओं में से 'चेर्नोबिल नाभिकीय दुर्घटना' एक है जो पूर्व सोवियत संघ के यूक्रेन में 'चेर्नोबिल' नामक स्थान पर 26 अप्रैल, 1986 को हुई थी।
- चेर्नोबिल पॉवर प्लांट की क्षमता 1000 मेगावाट थी, यह पिछले दो वर्षों से लगातार कार्य कर रहा था, इसे 25 अप्रैल 1986 को मरम्मत करने के लिये बंद कर दिया गया था। इस दौरान नियंत्रण छड़े (Control Rods) को निकाल लिया गया था तथा जल आपूर्ति भी घटा दी गई थी जिससे न्यूट्रॉन का अवशोषण कम हो गया तथा न्यूट्रॉन के विखण्डन के कारण कई गुना ऊर्जा बढ़ गई तथा रियेक्टर नंबर-4 में विस्फोट हो गया।
- यह विस्फोट इतना शक्तिशाली था कि रियेक्टर-4 के ऊपर की 1000 टन के कंक्रीट की परत उड़ गई तथा ग्रेफाइट छड़ों की दहनशीलता के कारण आग लग गई। इस समय संयंत्र का तापमान 2000°C के ऊपर था। जिससे ईंधन और रेडियोएक्टिव मलबा ज्वालामुखी के बादल की तरह पिघले हुये ठोस और गैसों के रूप में बह गया।
- ये मलबे और गैसें पूरे उत्तरी गोलार्द्ध के अधिकतर भाग पर छा गये। पोलैण्ड, डेनमार्क, स्वीडन, नार्वे आदि देश इस नाभिकीय विस्फोट से प्रभावित हुये।
- इस दुर्घटना के प्रथम दिन 31 व्यक्ति मर गये तथा 239 व्यक्ति अस्पताल में भर्ती किये गये। आयोडीन-131, सीजियम-134 तथा सीजियम-137 की अधिकता के कारण लगभग 5,76,000 लोग विकिरण के शिकार हुये जिन्हें थायरॉइड कैंसर व ल्यूकेमिया जैसी बीमारियाँ हुई।
- इसके अतिरिक्त कई वर्षों तक कृषि उत्पाद क्षेत्र भी प्रभावित रहे। अधिकतम विकिरण की वजह से अधिकांश

खेत, पेड़, झाड़ियाँ, पौधे आदि नष्ट हो गये थे। स्वीडन और डेनमार्क ने प्रदूषित रूसी उत्पादों पर प्रतिबंध तक लगा दिया था।

फुकुशिमा दाईची आपदा, जापान

- 11 मार्च सन् 2011 को जापान के फुकुशिमा में हुई नाभिकीय आपदा विश्व की सबसे बड़ी आपदाओं में से एक थी। यह संयंत्र के उपकरणों के फेल हो जाने से केन्द्र के पिघलने के कारण रेडियोएक्टिव पदार्थों के मुक्त होने पर हुआ।
- इसके पहले 11 मार्च को ही 9.0 रियेक्टर स्केल का भूकम्प जापान में आया था जिसके बाद समुद्र से उठी तरंगों ने सुनामी का रूप धारण कर लिया जिससे नाभिकीय संयंत्र प्रभावित हुआ तथा कूलिंग सिस्टम फेल हो जाने से संयंत्र 1, 2, 3, 4 बुरी तरह क्षतिग्रस्त हुये। लगभग 20 किमी. के क्षेत्र में रेडियोएक्टिवता के फैलाव का खतरा बना रहा।
- सीजियम के कारण रेडियोएक्टिवता का ऊँचा स्तर देखा गया जिससे संयंत्र से लगभग 30-50 किमी. का क्षेत्र प्रभावित हुआ। यह प्रभाव मुख्यतः जापान के उत्तरी भाग में था।
- आपदा के बाद आधिकारिक तौर पर पाइप के पानी से भोजन बनाने पर रोक लगा दी गई। मिट्टी में 'प्लूटोनियम (Plutonium)' की भी मात्रा पायी गई। रेडियोएक्टिव पदार्थ जल व वायु के कारण काफी दूर तक फैल गये थे जिससे स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ बढ़ गयी थीं।

नोट: फुकुशिमा तथा चेर्नोबिल नाभिकीय आपदाओं का स्तर-7 आँका गया जो International Nuclear Event Scale (INES) द्वारा मापी गयी अधिकतम Value है।

नाभिकीय खतरों से बचाव एवं नियन्त्रण (Protection from Nuclear Hazards and their Control)

नाभिकीय विस्फोटों के इतने घातक परिणाम हैं किन्तु अभी तक वैज्ञानिकों के पास इसे दूर करने अथवा उस पर पूर्ण नियन्त्रण स्थापित करने के कोई उपाय उपलब्ध नहीं हैं। निम्नांकित कुछ उपाय ऐसे हैं जिनके द्वारा काफी सीमा तक नाभिकीय दुष्प्रभावों से बचाव किया जा सकता है:-

- विकिरण सुरक्षा मानकों का उन कर्मियों द्वारा कड़ाई से पालन किया जाए जो नाभिकीय ऊर्जा सम्बन्धित केन्द्रों पर कार्यरत हैं।
- वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं और चिकित्सालयों में व्यक्तिगत बचाव के लिए निर्मित विशेष साधनों का उपयोग किया जाना चाहिए। जैसे-विशेष जूते, विशेष दस्ताने, चश्मे, मास्क, पूरे शरीर को ढकने वाले जैकेट, तथा पारदर्शी थर्मोप्लास्टिक के पदार्थ आदि।
- नाभिकीय विस्फोट कभी भी खुली हवा में नहीं किया जाना चाहिए।
- नाभिकीय विस्फोट भूमिगत स्थलों पर किया जाना चाहिए।
- न्यूक्लियर रिएक्टरों में अतिरिक्त क्रियाशील उत्पादों को बचाने के लिए बन्द शीतीकरण चक्र का उपयोग किया जाना चाहिए।
- नाभिकीय एवं रासायनिक उद्योगों में रेडियोधर्मी स्थानिकों (radioactive isotopes) का उपयोग गैसीय वाष्प की अवस्था में न करके मिट्टी या पानी के अन्दर किया जाना चाहिए।
- नाभिकीय अपशिष्टों का निस्तारण करने के पूर्व भूगर्भीय एवं जलीय पारिस्थितियों के साथ-साथ भविष्य में होने वाले सम्भावित परिवर्तनों को ध्यान में रखकर उचित स्थान का चयन किया जाना चाहिए।

तापीय प्रदूषण

जल राशि में अवांछनीय उष्ण पदार्थों का अधिक मात्रा में मिलल जाना तापीय प्रदूषण कहलाता है। इससे जल का तापमान सामान्य से अधिक बढ़ जाता है। यह उष्ण जल मानवों के लिए भी हानिकारक है और जलीय जीवों के लिए भी। कुछ जल जीव तो इस तापमान को सहन न कर सकने के कारण मर जाते हैं, और कुछ अपने स्थान का परित्याग कर देते हैं।

तापीय प्रदूषण का कारण एवं प्रभाव (Causes and Effects of Thermal Pollution)

- अनेक औद्योगिक इकाइयों के यंत्र जीवाश्म ईंधन से चलते हैं। उनसे उत्पन्न अतिरिक्त ऊष्मा को अवशोषित करने के

लिए बड़ी मात्रा में जल की आवश्यकता पड़ती है। संयंत्र शीतलन के पश्चात् इस जल का तापमान सामान्य से 8 से 10 डिग्री सेन्टीग्रेड तक बढ़ जाता है। नाभिकीय ऊर्जा संयंत्र, औद्योगिक इकाइयाँ, कोयले से चलने वाले संयंत्र, जल विद्युत ऊर्जा संयंत्र आदि तापीय प्रदूषण उत्पन्न करते हैं। इन इकाइयों से निकले हुए इस गर्म जल को नदियों, झीलों एवं समुद्र में प्रवाहित कर दिया जाता है जिससे जल का तापमान उच्च हो जाता है।

- जल राशि में ताप वृद्धि में उत्पन्न तापीय प्रदूषण के अनेक दुष्प्रभाव दृष्टिगोचर होते हैं। ये प्रभाव भौतिक, रासायनिक तथा जैविक तीनों प्रकार के होते हैं। तापीय प्रदूषण के कारण जलल की घुलति ऑक्सीजन की मात्रा में कमी आ जाती है जिसका जलीय जीवों के जीवन पर बुरा प्रभाव पड़ता है। इस ताप प्रदूषित जल में रहने वाले जलजीवों के क्रियाकलापों और आचरणों में भी परिवर्तन घटित होता है। उनकी पाचन एवं श्वसन दर तथा प्रजनन चक्र भी प्रभावित होता है। जल जीवों में प्रजनन एक निश्चित तापमान पर ही होता है। ताप वृद्धि के कारण अंडे नष्ट हो जाते हैं।
- उच्च तापमान पर जल की चिपचिपाहट (Viscosity) कम हो जाती है जिससे जल में तैरते पदार्थों के जमाव की प्रक्रिया में तेजी आती है। तापमान बढ़ने से जल में अनेक विषैले तत्व ज्यादा प्रभावकारी हो जाते हैं। रोगाणु का प्रभाव भी तीव्र हो जाता है। उच्च तापमान के कारण नीलहरित शैवाल तीव्रगति से बढ़ती है जो जलीय खाद्यशृंखला का संतुलन बिगाड़ देती है। जल का उच्च तापमान अनेक क्रियाओं को तीव्र कर देता है जिससे जलजीवों का जीवन छोटा अथवा समाप्त हो जाता है।

तापीय प्रदूषण का नियंत्रण (Control of Thermal Pollution)

तापीय प्रदूषण जलाशयों में गर्म जल के विसर्जन से होता है, अतः इस प्रदूषण पर नियन्त्रण पाने के लिए सबसे आवश्यक है कि औद्योगिक संयंत्रों के शीतलन के उपरान्त निकले गर्म जल को जलाशयों में जाने से रोका जाय। कुछ ऐसे उपाय हैं जिनके द्वारा इस गर्म जल को नदियों, झीलों आदि में प्रवाहित करने के पूर्व शीतल कर लिया जाता है:-

- वाष्पीकृत शीतकारक खम्भों (Evaporative Cooling Towers) का उपयोग करके गर्म जल के तापमान को घटा दिया जाता है और तब जलाशयों में प्रवाहित किया जाता है।
- शीतकारी तालाबों (Cooling Ponds) का उपयोग करना जल के ताप घटाने का सबसे उपयुक्त साधन है। इस तरह के तालाब में सतह अधिक विस्तृत होती है जिससे वायुमंडल में उष्मा का विसर्जन हो जाता है और जल शीघ्र शीतल हो जाता है।

रोड़ा पानी (Ballast water)

संयुक्त राष्ट्र ने प्राकृतिक बाधाओं के पार हानिकारक जीवों और रोगजनकों के हस्तांतरण को मान्यता दी, क्योंकि यह दुनिया के महासागरों और समुद्रों के चार सबसे बड़े दबावों में से एक है, जिससे वैश्विक पर्यावरणीय परिवर्तन होते हैं, साथ ही यह मानव स्वास्थ्य, संपत्ति और संसाधनों के लिए भी खतरा है। जहाजों द्वारा स्थानांतरित किए गए गिट्टी के पानी को ऐसी प्रजातियों के एक प्रमुख वेक्टर के रूप में मान्यता दी गई थी और इसे जहाज के गिट्टी पानी और तलछट (2004) के नियंत्रण और प्रबंधन के लिए अंतर्राष्ट्रीय कन्वेंशन द्वारा विनियमित किया गया था। गिट्टी जल प्रबंधन आवश्यकताओं से स्थायी अपवाद तब लागू हो सकते हैं जब गिट्टी के पानी का उठाव और निर्वहन 'उसी स्थान पर' हो। हालांकि, 'एक ही स्थान' की अवधारणा को अलग तरह से व्याख्या किया जा सकता है, जैसे, एक बंदरगाह बेसिन, एक बंदरगाह, एक लंगर, या एक बड़ा क्षेत्र यहां तक कि अधिक बंदरगाहों के साथ। यह देखते हुए कि कन्वेंशन प्रवर्तन की शुरुआत के करीब है, दुनिया भर के राष्ट्रीय प्राधिकरण जल्द ही अपवादों के लिए आवेदन के संपर्क में आएंगे। यहाँ हम 'एक ही स्थान' अवधारणा की विभिन्न व्याख्याओं के संभावित प्रभावों पर विचार करते हैं। हमने पर्यावरण, शिपिंग और कानूनी पहलुओं के माध्यम से एक ही स्थान के विभिन्न संभावित विस्तार पर विचार किया है। ऐसे क्षेत्रों का विस्तार, और अधिक बंदरगाहों को शामिल करना, कन्वेंशन के मुख्य उद्देश्य से समझौता कर सकता है। हम सलाह देते हैं कि 'समान स्थान' का अर्थ है सबसे छोटी व्यावहारिक इकाई, यानी, वही बंदरगाह, मौरंग या लंगर। एक संपूर्ण छोटा बंदरगाह, संभवतः लंगर भी शामिल है, इसे उसी स्थान के रूप में माना जा सकता है। पर्यावरणीय परिस्थितियों के एक ढाल के साथ बड़े बंदरगाहों के लिए, 'समान स्थान' का मतलब टर्मिनल या पोर्ट

बेसिन होना चाहिए। हम आगे अनुशांसा करते हैं कि IMO अवधारणाओं, मानदंडों और प्रक्रियाओं को शामिल करने के लिए एक मार्गदर्शन दस्तावेज तैयार करने पर विचार करता है, जिसमें बताया गया है कि 'समान स्थान' की पहचान कैसे की जाए, यह स्पष्ट रूप से पहचाना जाना चाहिए।

ठोस अपशिष्ट प्रदूषण

उपयोग के बाद बेकार तथा निरर्थक पदार्थों को ठोस अपशिष्ट तत्व की संज्ञा प्रदान की जाती है। उपयोग के पश्चात् इनकी उपादेयता समाप्त हो जाती है। परन्तु ये पर्यावरण की मौलिकता को समाप्त करने में सक्षम होते हैं। विश्व-स्तर पर जनसंख्या की वृद्धि के कारण इनके परिणाम में निरन्तर वृद्धि हो रही है। फलस्वरूप इनसे उत्पन्न प्रदूषण की समस्या निरन्तर जटिल होती जा रही है।

- स्पष्ट है कि ठोस अपशिष्टों का उत्पादन वास्तव में आधुनिक समृद्ध भौतिकवादी समाज की देन है। वास्तव में आर्थिक स्तर से सम्पन्न एवं औद्योगिक स्तर पर अत्यधिक विकसित पश्चिमी देशों की 'प्रयोग करो और फेंको संस्कृति' (Use and Throw Away Culture) ठोस अपशिष्ट प्रदूषण की विकट समस्या के लिए जिम्मेदार है क्योंकि इस समाज में उपयोग के तुरन्त बाद बचे समस्त ठोस अपशिष्टों को फेंक दिया जाता है। इसके विपरीत अविकसित एवं विकासशील देशों के निर्धन समाज की 'संरक्षण संस्कृति' (Conservation Culture) पश्चिमी समृद्ध देशों की तुलना में बहुत कम मात्रा में ठोस अपशिष्टों का उत्पादन करती है क्योंकि इन गरीब समाजों में वस्तुओं का कई बार उपयोग किया जाता है।
- ठोस अपशिष्ट तत्वों के अनेक स्रोत हैं। इनको भौतिक-जैविक एवं रासायनिक गुणों तथा उत्पादक स्रोतों के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है। यथा-
 - **धात्विक ठोस अपशिष्ट:** कांच, डिब्बे, बोतल, क्राकरी, कुर्सी, लोहा आदि।
 - **अधात्विक ठोस अपशिष्ट:** पैकिंग का अपशिष्ट, कपड़ा, रबर, काष्ठ, चर्म, भोज्य पदार्थ आदि।
 - **भारी ठोस अपशिष्ट:** मशीनों के पार्ट, फर्नीचर के टुकड़े, टायर आदि।
 - **राख:** काष्ठ, कोयला, उपली की राख।
 - **मृत जीव:** पशु, कुत्ता, बिल्ली तथा अन्य जंगली जन्तु।

- **मकानों के भग्नावशेष:** मिट्टी, पत्थर, काष्ठ तथा धातु के सामान।
- **कृषिजन्य अपशिष्ट:** भूसा, खाद, पत्तियाँ, डंठल, अनाज आदि।
- **मल-मूत्र:** ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में उत्सर्जित मल-मूत्र।
- **उद्योग जन्य अपशिष्ट:** नाभिकीय कचरा, कोयला, राख, रासायनिक अपशिष्ट तत्व आदि।

- जिस तरह से शहरों में निकलने वाले अपशिष्टों एवं कचरों की वार्षिक मात्रा में वृद्धि हो रही है उससे यह साफ हो जाता है कि भविष्य में बढ़ते कचरे भयंकर पर्यावरणीय समस्याओं के आगमन के खतरे की घंटी बजा रहे हैं।
- सागर तटीय भागों में कचरों तथा अपशिष्टों के निपटान के कारण कई प्रकार की पारिस्थितिकीय समस्याएँ उत्पन्न हो गयी हैं तथा मछलियों एवं कोरल सहित सागरीय जीवों की लगातार मृत्यु होती जा रही है। इसके अलावा भूमिगत जल में रिसाव आहार शृंखला में हानिकारक तत्वों का प्रवेश, दम घोटने वाली वाष्पों का आवरण, लाभदायक सूक्ष्मजीवों का विनाश, मच्छरों, कीटों एवं चूहों की वृद्धि तथा डायरिया, डिसेंट्री, हैजा, प्लेग एवं हैपेटाइटिस जैसे रोगों की वृद्धि आदि ठोस अपशिष्ट जनित समस्याएँ हैं।
- इनका नियोजित पुनर्उपयोग अथवा निपटान नितान्त आवश्यक है। इस दिशा में विकसित एवं विकासशील देश दोनों प्रयत्नशील हैं। इनका प्रबन्धन अधोलिखित प्रकार से किया जा सकता है। यथा-

- **पुनर्चक्रण (Recycling):** इस विधि द्वारा अपशिष्टों को पुनः प्रयोग में लाया जाता है। जैसे कि प्लास्टिक व धातुओं को गलाकर पुनः प्रयोग में लाना, अखबार तथा पुराने कागजों को गलाकर पुनः चक्रित करना तथा पुरानी प्लास्टिक की दरियाँ, चटाई, रस्सियाँ आदि बनाना।
- **अपशिष्टों को नष्ट करना (Disposal of Waste):** जो ठोस कचरें विभाजित या पुनर्चक्रित नहीं हो सकते उन्हें अधोलिखित प्रकार से नष्ट किया जाता है। यथा-
 1. **कम्पोस्टिंग (Composting):** जैविक अपशिष्टों को खाद में बदल देना।
 2. **दबाना (Landfills):** इस प्रक्रिया के तहत जमीन में गहरा गड्ढा में दबा देते हैं तथा उसे मिट्टी से ढक देते हैं जिससे वो वातावरण को प्रदूषित कर सकें।

3. **दहन (Incineration) :** इसमें अपशिष्टों को, जो ज्वलनशील है, जैसे कि अस्पताल के अपशिष्ट, निस्तारण के लिए एकत्र करते हैं तथा उनको जला देते हैं। यदि उन्हें खुली जगह में जलाते हैं तो हानिकारक गैसें निकलती हैं जो पर्यावरण को नुकसान पहुँचाती हैं। इसलिए इन्हें दहन यंत्र (Incinerator Plant) में जलाते हैं। भारत में दहन का संयंत्र नागपुर में लगाया गया है।
4. **विखण्डन (Pyrolysis) :** इस पद्धति के अन्तर्गत अपशिष्टों को मशीनों द्वारा पीसा जाता है क्योंकि वे न ज्वलनशील होते हैं और न पानी में घुलते हैं। जैसे कि चीन मिट्टी के बर्तन, प्लास्टिक आदि।

जैव-प्रदूषण

रोगकारक सूक्ष्म जीवों से संक्रमित कर मनुष्यों, फसलों, फलदायी वृक्षों व सब्जियों का विनाश करना जैव-प्रदूषण है।

- सन् 1846 में जीनीय एकरूपता के कारण (Due to Genetic Uniformity) यूरोप में आलू की समस्त फसल नष्ट हो गयी जिसके फलस्वरूप 10 लाख लोगों की मृत्यु हो गयी और 15 लाख लोग अन्यत्र पलायन कर गये। चूँकि सारी आलू में एक ही प्रकार का जीन था। अतः सब एक ही प्रकार के रोगाणुओं द्वारा संक्रमित होकर नष्ट हो गयी।
- सन् 1984 ई. में फ्लोरिडा में जीनीय एकरूपता के कारण खट्टे फलों (Citrus Fruit) की सारी फसलें एक ही प्रकार के बैक्टीरिया द्वारा संक्रमित होकर नष्ट हो गयीं, अतः इस जैवीय प्रदूषण को दूर करने के लिए एक करोड़ अस्सी लाख पेड़ों को मजबूरन काट कर गिरा देना पड़ा।
- अब इस जैव प्रदूषण को जैव हथियार के रूप में प्रयोग किया जा रहा है।
- अक्टूबर, 2001 में संयुक्त राज्य अमेरिका के समाचार पत्र 'सन' के फोटो सम्पादक बॉब स्टीबेस की एंथ्रैक्स (Anthrax) नामक रोग से हुई मृत्यु ने जैव प्रदूषण को जैव आतंक (Bio Terrorism) का दर्जा दिला दिया। बाद में न केवल अमेरिका बल्कि भारत, पाकिस्तान तथा अन्य देशों में भी एंथ्रैक्स बैक्टीरिया से प्रदूषित लिफाफे लोगों के पास पहुँचने लगे और कई देशों के लोग इस जैव-आतंक से भयान्क्रान्त हो गये।

- जैव-प्रदूषण के माध्य से फैलाये जा सकने वाले घातक रोगों में- एंथ्रैक्स, बोटुलिज्म, प्लेग, चेचक, टुयुलरेमिया एवं विषाणुवी रक्त स्रावी ज्वर प्रमुख हैं।
- निम्नलिखित वर्षों में रोगाणुओं का प्रयोग जैव हथियार के रूप में किया गया-
 - 1519 ई. में स्पेन की सेना ने मैक्सिको में चेचक के विषाणुओं का प्रदूषण फैला दिया जिसके फलस्वरूप वहाँ की आधी आबादी समाप्त हो गयी।
 - 1530 ई. में स्पेन ने पुनः मैक्सिको में चेचक, गलसुआ (Mumps), खसरा (Measles) आदि बीमारियों का प्रदूषण फैलाया जिसके कारण लाखों मारे गये।
 - 1754-1767 की अवधि में ब्रिटेन की सेना ने चेचक के मरीजों द्वारा ओढ़े गये कम्बलों को उत्तरी अमेरिका के लोगों में बँटवा दिये जिसके कारण वहाँ का एक वृहत जन-समूह काल कवलित हुआ।
 - 1939-45 में द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान जापानी सेना ने चीन के कुछ क्षेत्रों में प्लेग के पिस्सुओं द्वारा प्लेग फैला दिया।
 - 2001 में एक आतंकवादी संगठन ने अमेरिका, भारत और पाकिस्तान आदि देशों में एंथ्रैक्स के बीजाणुओं को, पत्रों के लिफाफे में भरकर जैव-प्रदूषण फैलाने का प्रयास किया जिसके कारण अमेरिका में कई लोगों की मृत्यु हो गयी।

जैव प्रदूषण के आतंक से निबटने के उपाय

- बीमारियाँ फैलाने वाले रोगाणुओं पर अध्ययन, अनुसंधान तथा परीक्षण करने के लिए रक्षा अनुसंधान व विकास संगठन (DRDO) ने 1972 में ग्वालियर (मध्य प्रदेश) में एक प्रयोगशाला स्थापित किया।
- भारत सरकार के स्वास्थ्य मंत्रालय ने सन् 2000 में राष्ट्रीय डिजीज सर्विलेंस प्रोग्राम आरम्भ किया। ज्ञातव्य है कि इण्डियन इन्स्टीट्यूट ऑफ कम्प्युनिकेबल डिसेजिज चौकसी का कार्य कर रहा है और इसमें मिलिटरी इंटेलिजेंस, बार्डर सिक्योरिटी फोर्स, इन्डो-तिब्बत बार्डर पुलिस तथा स्पेशल सर्विस ब्यूरो आदि संगठन मदद कर रहे हैं।

- 1925 में रासायनिक और जैविक हथियारों का निषेध करने के लिए 'जेनेवा प्रोटोकॉल' पर हस्ताक्षर किया गया था।
- 10 अप्रैल, 1972 को सभी प्रकार के हथियारों को निषिद्ध करने के लिए 'जैव हथियार सभा' के प्रस्तावों पर हस्ताक्षर किये गये। यह BWC 1975 से प्रभावी हुई।

रेडियोधार्मी प्रदूषण

रेडियोधार्मी प्रदूषण, प्रदूषण के सबसे घातक स्वरूपों में से एक है। रेडियोधार्मी तत्वों के बढ़ते उपयोग के कारण वैश्विक स्तर पर रेडियोधार्मी प्रदूषण की समस्या भयावह और विकराल हुई है। रेडियोधार्मी तत्वों का उपयोग इसलिये बढ़ा है, क्योंकि ये ऊर्जा के असीमित स्रोत होते हैं तथा इनसे प्रचुर मात्रा में ऊर्जा प्राप्त की जाती है। यूरेनियम तत्वों की ऊर्जा क्षमता का अनुमान आप इसी से लगा सकते हैं कि यूरेनियम-235 की एक टन की मात्रा से उतनी ही ऊर्जा पैदा की जा सकती है, जितनी कि 30 लाख टन कोयले से अथवा 1 करोड़ 20 लाख बैरल पेट्रोलियम पदार्थों से। रेडियोधार्मी तत्वों ने हमें ऊर्जा का असीमित भंडार तो दिया, किन्तु साथ ही भयावह प्रदूषण की सौगात भी दी।

- रेडियोधार्मी पदार्थों का प्रयोग परमाणु हथियारों में तो होता ही है, ये अनुसंधान कार्यों और चिकित्सा जगत में भी प्रयुक्त होते हैं। विविध प्रयोजनों में इन परमाणु घटकों के उपयोग के कारण बड़ी मात्रा में परमाणु कचरा भी उत्पन्न होता है, जो उतना ही घातक होता है, जितने कि स्वयं परमाणु घातक होते हैं। इस कचरे ने पर्यावरण से जुड़ी अनेक समस्याएँ पैदा की हैं। अन्य प्रकार के प्रदूषणों की अपेक्षा रेडियोधार्मी प्रदूषण कहीं ज्यादा घातक होता है, क्योंकि हजारों वर्षों तक इसका प्रभाव वातावरण में बना रहता है। यह इतना अधिक घातक होता है कि इसका प्रभाव बढ़ने पर यह समूचे पारिस्थितिकी तंत्र तक को नष्ट कर सकता है। इसीलिये अब यह एक वैश्विक जिम्मेदारी बनती है कि पर्यावरण व पारिस्थितिकी तंत्र को बचाने के लिये या तो रेडियोधार्मी पदार्थों के उपयोग को पूर्णतः बन्द किया जाये या इसे सुरक्षित ढंग से न्यूनतम स्तर पर लाया जाये।
- रेडियोधार्मी प्रदूषण के मुख्यतः दो स्रोत हैं। ये हैं- प्राकृतिक स्रोत व मानव निर्मित स्रोत। इनमें मानव निर्मित स्रोत

अधिक खतरनाक हैं। वस्तुतः रेडियोधार्मी प्रदूषण के प्राकृतिक स्रोत परिणाम की दृष्टि से घातक नहीं होते तथा इनसे न के बराबर हानि होती है। ऐसा इसलिये है कि इनकी प्रक्रियाएँ प्राकृतिक स्तर पर घटित होती हैं, जो कि मनुष्य के नियंत्रण में नहीं होती हैं, जबकि मानव निर्मित स्रोतों के दुष्परिणाम व्यापक होते हैं। मानव निर्मित रेडियोधार्मी प्रदूषणों में मुख्य हैं-

□ **परमाणु विस्फोट (Nuclear Explosion):** परमाणु विस्फोट न सिर्फ रेडियोधार्मी प्रदूषण का सबसे बड़ा स्रोत है, बल्कि यह सर्वाधिक घातक भी है। शक्ति हासिल करने की होड़ में राष्ट्रों द्वारा बढ़-चढ़कर परमाणु परीक्षण किये जाते हैं। इस दौरान रेडियोन्यूक्लाइड्स (Radionuclides) का उत्सर्जन व्यापक पैमाने पर होता है। यह व्यापक मात्रा में बारिश के साथ पृथ्वी पर जम जाती है और अनेक घातक प्रभावों का कारण बनती है। धरती पर इसके जमाव के कारण इसके घातक तत्व विभिन्न भोजन श्रृंखलाओं में प्रवेश कर पशुओं के शरीर में पहुँच जाते हैं और गंभीर समस्याओं का कारण बनते हैं। पशुओं के मांस आदि के जरिये इनकी पहुँच मनुष्यों तक होती है और ये अनेक प्राणघातक बीमारियों की सौगात देते हैं, जिनमें कैंसर, श्वास रोग व चर्मरोग आदि प्रमुख हैं।

□ **परमाणु ऊर्जा संयंत्र (Nuclear Power Plants):** विश्व के अधिकांश देशों में ऊर्जा संबंधी जरूरतों को पूरा करने के लिये परमाणु ऊर्जा संयंत्रों की स्थापना की गई है। वर्तमान समय में समूचे विश्व में लगभग 300 परमाणु ऊर्जा संयंत्र काम कर रहे हैं। इनसे उत्सर्जित होने वाले रेडियोधार्मी पदार्थ रेडियोधार्मी प्रदूषण का बड़ा कारण बनते हैं। यह प्रदूषण तब और बढ़ जाता है, जब इन परमाणु ऊर्जा संयंत्रों में कोई दुर्घटना हो जाती है और रेडियोधार्मी पदार्थों का रिसाव बढ़ जाता है। कुछ समय पहले जापान के फुकुशिमा संयंत्र में हुई दुर्घटना के चलते मची तबाही इसका ज्वलंत उदाहरण हुआ करता है, जो कि पर्यावरण को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है। परमाणु ऊर्जा

संयंत्रों से निकलने वाला कचरा भी एक बड़ी समस्या होता है। इस रेडियोधर्मी कचरे के सुरक्षित निस्तारण की कोई कारगर विधि हम आज तक विकसित नहीं कर पाये हैं। या तो इस कचरे को समुद्र में प्रवाहित कर दिया जाता है और यह समुद्र की अतल गहराइयों में समा जाता है अथवा जमीन में बहुत नीचे इसे गाड़ दिया जाता है। ये दोनों ही विधियाँ सुरक्षित नहीं हैं और इस प्रकार निस्तारित किया गया कचरा पर्यावरण को क्षति पहुँचाता है और इसके दूरगामी दुष्परिणाम सामने आते हैं। ये वातावरण को तो जहरीला बनाते ही हैं, भू-गर्भीय प्रदूषण को बढ़ाकर अनेक समस्याएँ पैदा करते हैं।

- **रेडियो आइसोटोप (Radio Isotopes):** भाँति-भाँति के अनुसंधानों के लिये प्रयोगशालाओं में रेडियो आइसोटोप्स का निर्माण और उपयोग किया जाता है। प्रयोग किये जाने के बाद इनका सुरक्षित निस्तारण करने के बजाये इन्हें यूँ ही फेंक दिया जाता है, जिससे जल व मृदा प्रदूषण बढ़ता है। इनके जहरीले तत्व पर्यावरण के लिये घातक साबित होते हैं।

विकिरण के रूप में रेडियोधर्मी प्रदूषण (Radio Active Pollution in form of Radiations)

विकिरण के रूप में भी रेडियोधर्मी प्रदूषण फैलता है। इसका माध्यम बनती हैं- अल्फा (Alfa), बीटा (Beta) व गामा (Gamma) किरणें। यहाँ इनके बारे में जान लेना भी उचित होगा।

- **अल्फा किरणें (Alfa Rays)-** ये वे हीलियम नाभिक होते हैं, जिनका घनत्व हाइड्रोजन की अपेक्षा चार गुना अधिक होता है तथा ये किसी आयोनाइज्ड हाइड्रोजन अणु की अपेक्षा दो गुना आवेशित हो सकते हैं। इनकी भेदक शक्ति बीटा और गामा किरणों की तुलना में निम्न होती है, जबकि ये उच्च शक्ति वाले ऑयनीकरण माध्यम होते हैं। इनका विकिरण काफी घातक होता है तथा मनुष्य यदि लंबे समय तक इनके संपर्क में रहता है, तो ये मानव त्वचा को इस हद तक जला सकती है कि फिर उनका उपचार संभव नहीं रह जाता है।
- **बीटा किरणें (Beta Rays)-** ये नकारात्मक रूप से आवेशित कण होते हैं। ये अति वेगमान होती हैं। वेग के

संदर्भ में इनकी तुलना प्रकाश की गति से की जा सकती है। ये किसी गैस का आयनीकरण (ionise) करने में सक्षम होती हैं। अल्फा कणों की तुलना में बीटा कणों की भेदक शक्ति 100 गुना अधिक होती है। इनका दीर्घकालिक संपर्क मानव त्वचा को इस हद तक झुलसा सकता है कि फिर उसका उपचार संभव नहीं रह जाता।

- **गामा किरणें (Gamma Rays)-** प्रकाश एवं एक्स किरणों के समान प्रकृति वाली गामा किरणें विद्युत चुम्बकीय तरंगें होती हैं, हालाँकि एक्स किरणों की तुलना में ये अत्यंत सूक्ष्म दैर्ध्य तरंगें (Shorter Wavelengths) होती हैं। एक अल्फा एवं बीटा कणों का उत्सर्जन किसी नाभिक को उत्तेजित अवस्था में पहुँचाता है। जैसे-जैसे नाभिक सामान्य अवस्था में आता है, वैसे-वैसे अतिरिक्त ऊर्जा उसमें से गामा किरणों के रूप में बाहर आती है। इनमें अत्यंत न्यून ऑयनीकरण शक्ति (Ionization Power) होती है। रेडियोधर्मी पदार्थों से निकलने वाली तीनों प्रकार के विकिरणों में गामा किरणें सर्वाधिक शक्तिशाली भेदक होती हैं। ये बहुत शक्तिशाली किरणें होती हैं, जिनकी जैविक तंतुओं पर तीव्र प्रतिक्रिया होती है। इनका प्रयोग कैंसर व ट्यूमर जैसी बीमारियों के उपचार में किया जाता है।

जीवित अवयवों पर रेडियोधर्मी प्रदूषण के दुष्परिणाम (Effects of Radioactive Pollution on Living Organisms)

रेडियोधर्मी पदार्थों से होने वाला विकिरण जीवित अवयवों के शरीर में ऑयनीकरण (Ionization) उत्पन्न करता है, जिससे अवयवों को भारी क्षति पहुँचती है। यह अवयवों के आनुवांशिक स्तर में भी परिवर्तन लाता है, जिससे न केवल उस अवयव को, बल्कि उसकी आगामी पीढ़ियों के स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। स्वास्थ्य को होने वाली यह क्षति विकिरण के साथ होने वाले सम्पर्क की अवधि और मात्रा पर निर्भर करती है। ऊतक, कोशिकाओं, क्रोमोसोम और डीएनए के स्तरों पर रेडियोधर्मी विकिरण असमान्यताएँ पैदा करता है। मुख्य दुष्प्रभावों को यहाँ बिन्दुवार दिया जा रहा है-

- विकिरण की अल्पमात्र से त्वचा जल सकती है, जिसके परिणामस्वरूप आगे चलकर त्वचा का कैंसर हो सकता है।

- विकिरण की एक साधारण सी मात्रा भी हड्डियों की मज्जा को हानि पहुंचा सकती है, जिससे ल्यूकेमिया अथवा रक्त कैंसर (Blood Cancer) जैसी गंभीर बीमारियाँ हो सकती हैं।
- विकिरण के साथ सतत संपर्क में रहने के कारण आनुवांशिक संरचना में असमानतायें विकसित हो सकती हैं, यानी डीएनए की संरचना में परिवर्तन हो सकता है। इसे वैज्ञानिक भाषा में म्यूटेशन (Mutation) कहा जाता है, जो भावी पीढ़ियों में हानिकारक प्रभाव उत्पन्न कर सकता है।
- रेडियोधर्मी यौगिक किसी भोजन श्रृंखला द्वारा पशुओं के शरीर में एकत्र हो सकते हैं। समय के साथ इनकी सघनता बढ़ती जाती है। इस प्रक्रिया को जैविक बहुगुणन (Biological Magnification) कहा जाता है, जो समय के साथ-साथ संबंधित अवयव के लिये घातक सिद्ध होता है।
- जीवित अवयवों के कुछ अंग जैसे- लसीका पर्व (Lymph Nodes), तिल्ली (Spleen) व अस्थि मज्जा (Bone Marrow) आदि विकिरण के प्रति अत्यंत संवेदनशील होते हैं। दीर्घकालिक संपर्क के कारण ये शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली (Immune System) को पूर्णतः नष्ट कर देते हैं।
- लंबे समय तक विकिरण के संपर्क में रहने वाली माँ एक अपाहिज बच्चे को जन्म दे सकती है। कारण, विकिरण उसके भ्रूण पर दुष्प्रभाव डालता है।
- रेम्स नामक इकाई का प्रयोग जैविक हानियों के मापन हेतु किया जाता है। यदि विकिरण की मात्रा 0 से 25 रेम्स तक होती है, तो इसका कोई अवलोकनीय प्रभाव नहीं होता है। यदि इसकी मात्रा 25 से 50 तक होती है, तो श्वेत रक्त कणिकाओं में कमी आने लगती है। यदि विकिरण के मात्रा 50 से 100 रेम्स होती है, तो श्वेत रक्त कणिकाओं में ज्यादा कमी होने लगती है। यदि विकिरण (वमन) आना शुरू हो जाता है। यदि विकिरण की मात्रा 200 से 500 तक होती है, तो रक्त की नसें फटने लगती हैं तथा अल्सर की समस्या हो सकती है। 500 रेम्स से अधिक विकिरण की मात्रा मौत का कारण बन सकती है।

रेडियोधर्मी कचरे का प्रबंधन

हम पहले ही बता चुके हैं कि परमाणु कचरे के भयावह दुष्परिणाम सामने आते हैं। अभी तक हम इस कचरे के

निस्तारण की सुरक्षित विधियाँ तलाश नहीं पाये हैं। कचरा प्रबंधन हेतु फिलहाल तीन विधियों का प्रयोग वैश्विक स्तर पर किया जा रहा है। ये हैं- (1) परिरोध (Confinement) (2) वाष्पीकरण एवं फैलाव (Evaporation and Dispersion) तथा (3) विलंबीकरण एवं क्षय (Delay and Decay)। यहाँ इन विधियों के बारे में जान लेना आवश्यक होगा।

1. परिरोध (Confinement): रेडियोधर्मी कचरे के प्रबंधन के लिये अधिकांश देश इस विधि को अपना रहे हैं। इसके अन्तर्गत सावधानीपूर्वक चुने गये ऐसे पदार्थों के लिये बृहदाकार टंकियों का निर्माण किया जाता है, जिनमें रिसाव की गुंजाइश न रहे और घातक तत्वों का मिश्रण पर्यावरण में न हो पाये। ये टंकियाँ सामान्यतः स्टेनलेस स्टील से निर्मित होती हैं। इनमें किसी भी प्रकार का रिसाव पता चलने पर फौरन रोकथाम के उपाय करते हुये सावधानियाँ बरती जाती हैं।

2. वाष्पीकरण एवं फैलाव (Evaporation and Dispersion): इस विधि को रेडियोधर्मी कचरे के प्रबंधन की सबसे सरल विधि माना जाता है। जैसा कि नाम से ही विदित होता है, इसमें वाष्पीकरण द्वारा कचरे का निस्तारण किया जाता है। हालांकि यह विधि अत्यंत खर्चीली पड़ती है तथा इसमें ऊर्जा का व्यय भी अत्यधिक होता है। इसके बाद भी कुछ कचरा तरल रूप में बचा रहता है, जिसके निस्तारण की आवश्यकता होती है। कुछ देशों में इस तरह कचरे को भी वाष्पीकृत किया जाता है और उसके बाद बचे अवशेष को सीमेंट में मिला दिया जाता है। इसके बाद से कांच के मिश्रण के साथ मिलाकर खुले हुये तारकोल में मिला दिया जाता है फिर अंतिम चरण में इसे ठोस कचरे के रूप में जमीन के भीतर काफी गहराई में दबा दिया जाता है।

3. विलंबीकरण एवं क्षय (Delay and Decay): इस विधि का प्रयोग उन रेडियोधर्मी तत्वों पर किया जाता है, जो कम समय तक बने रहते हैं। इन्हें विषहीन बनाकर अपने आप ही क्षय होने के लिये समय पर छोड़ दिया जाता है।

उक्त विधियों के अलावा रेडियोधर्मी कचरे की समुद्री निस्तारण की विधि भी प्रचलित रही है। हालांकि अब इससे बचा जा रहा है। ऐसा माना जाता है कि परमाणु ऊर्जा उद्योगों द्वारा

‘रेडियोन्यूक्लाइड्स’ की एक बहुत बड़ी मात्रा पहले से ही समुद्र में फेंकी जा चुकी है। रेडियोधर्मी कचरे को समुद्र में फेंके जाने की प्रक्रिया बहुत महंगी है। यूरोपीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी, इंग्लैण्ड और अमेरिका भले ही पहले इस विधि को अपना चुके हैं, किन्तु अब यह विधि चलन से बाहर है, क्योंकि यह खर्चीली भी ज्यादा है और यह समुद्री पर्यावरण को नुकसान भी पहुंचाती है।

रेडियोधर्मी प्रदूषण पर नियंत्रण के उपाय (Control of Radioactive Pollution)

रेडियोधर्मिता से पैदा होने वाले घातक प्रदूषण को रोकने की कोई कारगर विधि हम अभी तक खोज नहीं पाये हैं। इस दिशा में तेज प्रयासों की आवश्यकता है, क्योंकि यह एक ऐसी भयावह समस्या है, जो कि मानव अस्तित्व को ही मिटा सकती है। ऐसे में यह बहुत जरूरी है कि रेडियोधर्मी प्रदूषण को रोकने के उपाय हर स्तर से किया जाये। यहाँ ऐसे ही कुछ प्रमुख उपाय सुझाये जा रहे हैं, जिन्हें अपनाकर काफी हद तक इस समस्या को नियंत्रित किया जा सकता है। तो आइये इनके बारे में जानें-

- संपूर्ण विश्व में किसी भी राष्ट्र के लिये परमाणु हथियारों के विकास एवं निर्माण को शत प्रतिशत प्रतिबंधित कर दिया जाना चाहिये।
- रेडियोधर्मी कचरे के निस्तारण में उच्च कोटि के सतर्कता बरती जानी चाहिये तथा समुचित वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग किया जाना चाहिये जिससे इनके द्वारा पर्यावरण दूषित न हो सके।
- सभी परमाणु रियेक्टरों का समुचित एवं पर्याप्त रखरखाव किया जाना चाहिये जिससे इनसे किसी प्रकार के रेडियोधर्मी पदार्थों का रिसाव न हो और न ही वहाँ कार्यरत कर्मचारियों की किसी लापरवाही से किसी प्रकार की दुर्घटना घटित हो सके।
- प्रयोगशालाओं में प्रयोग में लाये जाने वाले रेडियो आइसोटोपों को अत्यन्त सावधानीपूर्वक प्रयोग किया जाना चाहिये। पर्यावरण में इनका विस्तारण करने के पूर्व इन्हें समुचित रूप से निष्क्रिय किया जाना चाहिये।
- वैज्ञानिकों ने विभिन्न प्रकार के पॉलीमरों की पहचान रेडियोधर्मी पदार्थों से सुरक्षा प्रदान करने में सक्षम पदार्थों

के रूप में की है। इसके अलावा कई ऐसी विधियों का भी विकास किया गया है जिनसे इन पॉलीमर की रेडियों विकिरण को अधिकाधिक सहन करने की क्षमता स्थाई रूप से बनी रह सके और इनमें न्यूनतम रासायनिक परिवर्तन हो सके।

- रेडियो आइसोटोप के उत्पादन को यथासंभव सीमित कर दिया जाना चाहिये क्योंकि एक बार इनका उत्पादन हो जाने पर वर्तमान समय में ज्ञात तकनीकों द्वारा ये पूर्णतः हानिरहित नहीं हो सकते।
- जहाँ कहीं भी रेडियोधर्मी प्रदूषण बहुत अधिक मात्रा में हो, ऊँची चिमनियों तथा कर्मचारियों के लिये हवादार वातावरण का ध्यान रखा जाना चाहिये। इससे रेडियोधर्मी प्रदूषकों का निस्तारण प्रभावशाली विधि से किया जा सकता है।
- नये परमाणु ऊर्जा संयंत्र की स्थापना के समय स्थापना स्थल, संयंत्र की डिजाइन, संचालन प्रक्रिया, निकलने वाले कचरे का निस्तारण, निस्तारण स्थल आदि के सम्बन्ध में गहन सर्वेक्षण पहले से ही कर लिया जाना चाहिये। इसके साथ-साथ ऐसे संयंत्रों के पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी तंत्र पर पड़ सकने वाले दीर्घकालिक प्रभावों का आकलन भी किया जाना चाहिये।

विकिरण खतरों का नियंत्रण

परमाणु ऊर्जा इकाईयों में कार्यरत लोगों की सुरक्षा हेतु समुचित उपायों का प्रबंध किया जाना चाहिये। परमाणु रिएक्टरों के दुष्परिणामों को भुगतने वालों में सबसे अधिक संख्या वहाँ कार्यरत कर्मचारियों की ही होती है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित उपाय कारगर हो सकते हैं-

- रेडियो विकिरण से बचने का सर्वोत्तम उपाय समुचित कवच धारण करना होता है। श्रमिकों को मास्क, दस्तानों, जूतों तथा टोपी आदि का प्रयोग करना चाहिये जो ऐसे पदार्थों द्वारा निर्मित हों जिनपर परमाणु नाभिकों को प्रभाव न पड़ता हो अथवा न्यूनतम दुष्प्रभाव हो।
- रेडियोधर्मी संयंत्र संचालन के दौरान रेडियोधर्मी यौगिकों से श्रमिकों को एक सुरक्षित दूरी सदैव बनाये रखनी चाहिये।
- रेडियो नाभिकों से लगी हुई किसी भी प्रकार की चोट सदैव मात्रा आधारित होती है। अतः किसी भी रेडियो नाभिक

यौगिक का सामना किये जाने में यथासंभव कमी लाई जानी चाहिये तथा जहाँ तक हो सके कार्य को पॉली आधार पर किया जाना चाहिये।

- परमाणु संयंत्रों में उच्चस्तरीय निगरानी को सदैव बनाये रखा जाना चाहिये जिससे उनका सामना करने की स्थिति का कभी भी निर्धारित सीमा का उल्लंघन न होने पाये। रेडियोधर्मिता सुरक्षा पर अंतर्राष्ट्रीय आयोग (आई.सी.आर. पी.) ने श्वास अथवा भोजन के लिये ऐसी अधिकतम स्वीकृत सांद्रता का सुझाव दिया है जिसे कठोरता से अनुसरण किया जाना चाहिये।
- रेडियोग्राफी के समय किसी भी व्यक्ति को समुचित लेड तथा रबर का ऐपन तथा दस्ताने पहनने चाहिये।

प्लास्टिक प्रदूषण

अपनी उपादेयता के कारण प्लास्टिक जहाँ हमारी रोजमर्रा के ज़िंदगी में इस हद तक सम्मिलित हो चुका है कि इसे अब जीवन से बाहर निकाल पाना संभव नहीं रह गया है, वहीं इसने प्रदूषण की समस्या को भी बढ़ाया है, जो कि एक नये प्रकार का प्रदूषण है तथापि जसे हम 'प्लास्टिक प्रदूषण' की समस्या कहते हैं। प्लास्टिक में तमाम खूबियाँ होती हैं। मसलन, यह हल्का होता है, जलावरोधी होता है, इसमें जंग प्रतिरोधक शक्ति तो होती ही है, यह सर्द-गर्म को सहन करने की भी क्षमता रखता है। अपनी इन्हीं खूबियों के कारण प्लास्टिक ने देखते ही देखते मानव जीवन पर अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया और जीवन के हर क्षेत्र में इसका दखल बढ़ा। इन सारी खूबियों के बावजूद प्लास्टिक ने खतरनाक हद तक प्रदूषण की समस्या को बढ़ाया भी है। प्लास्टिक की तमाम खूबियों पर इसका एक अवगुण भारी पड़ता है वह यह है कि प्लास्टिक प्राकृतिक रूप से विघटित नहीं हो पाता है। दीर्घ अवधि तक अपना अस्तित्व बनाये रखने के कारण यह पर्यावरण और प्रकृति को व्यापक पैमाने पर क्षति पहुँचाता है।

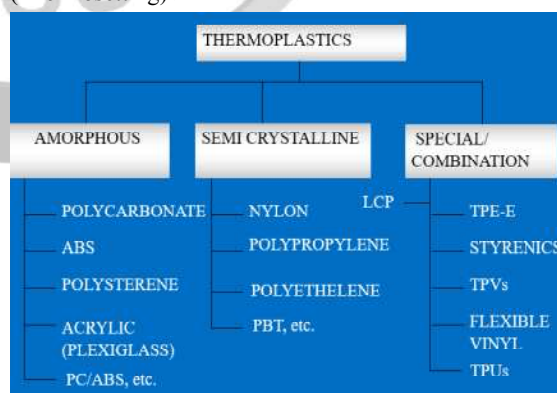
- आज प्लास्टिक प्रदूषण की एक भयावह तस्वीर हमारे सामने है। यह एक वैश्विक समस्या है। समूचे विश्व में हर साल अरबों की संख्या में खाली प्लास्टिक के थैले फेंक दिये जाते हैं। नाले-नालियों में जाकर ये उनके प्रवाह को अवरुद्ध कर देते हैं। इनकी सफाई तो खर्चीली पड़ती ही है, जल के साथ बहकर ये अंततः नदियों व समुद्रों में पहुँच

जाते हैं। चूँकि ये प्राकृतिक रूप से विघटित नहीं होते, इसलिये नदियों, समुद्रों आदि के जीवन व पर्यावरण को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हैं।

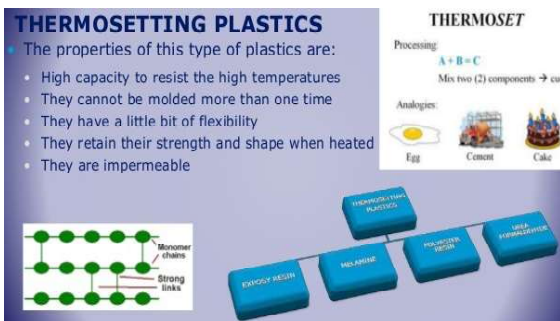
- प्लास्टिक प्रदूषण के कारण आये दिन वैश्विक स्तर पर लाखों की संख्या में पक्षियों आदि की मौत की खबरें तो मिलती ही हैं, ये प्रदूषण व्हेल, सील तथा कछुओं आदि की मौत का भी कारण बनता है। ये प्लास्टिक के अंशों को निगलने के कारण काल का ग्रास बनते हैं।
- आज विश्व का लगभग प्रत्येक देश प्लास्टिक से उत्पन्न प्रदूषण की विनाशकारी समस्या को झेल रहा है। भारत में तो स्थितियाँ कुछ ज्यादा ही बदतर हैं। यहाँ प्लास्टिक की थैलियों को खाने से गायों और आवारा पशुओं के मरने के समाचार रोज मिला करते हैं।

प्लास्टिक का संयोजन (Composition of Plastic)

वस्तुतः प्लास्टिक कार्बनिक पदार्थों से निकाला गया एक वृहद आण्विक बहुलक पदार्थ होता है। ये हाइड्रोकार्बन के सूक्ष्म अणु होते हैं, जो एक साथ जुड़कर वृहद अणुओं का निर्माण करते हैं। इस कार्बनिक पदार्थ का सबसे प्रमुख स्रोत नेफ्था (3-तैल) होता है, जो कच्चे पेट्रोलियम तेल से प्राप्त किया जाता है। प्लास्टिक को मुख्यतः दो श्रेणियों में विभक्त किया गया है। ये हैं- थर्मोप्लास्टिक (Thermoplastic) व थर्मोसेटिंग (Thermosetting)।



- थर्मोप्लास्टिक (Thermoplastic) के अन्तर्गत आते हैं- पॉलीथाइलिन (Polyethylene), पॉली विनाइल क्लोराइड (Poly Vinyl Chloride - PVC), पॉलीप्रोपीलीन (Polypropylene) व पॉलीस्टीरीन (Polystyrene)।



- थर्मोसेटिंग के अन्तर्गत आते हैं- बेकलाइट (Bakelite), मेलामाइन (Malamine), पॉलिएस्टर (Polyesters) तथा एपाक्सी रेसिन (Epoxy Resin)। गौरतलब है कि सभी प्रकार के थर्मोप्लास्टिक गर्म किये जाने पर मुलायम हो जाते हैं तथा ठण्डा किये जाने पर भण्डारण योग्य करके उसकी मूल अवस्था में वापस नहीं लाया जा सकता। अतः मात्र थर्मोप्लास्टिक की ही रीसाइक्लिंग (पुनश्चक्रण) संभव हो पाती है। रीसाइक्लिंग की दृष्टि से ही थर्मोप्लास्टिक से जुड़े न सिर्फ कुछ कोड निर्धारित किये गये हैं, बल्कि वैश्विक स्तर पर थर्मोप्लास्टिक सामग्री के निर्माताओं के लिये यह अनिवार्य कर दिया गया है कि वे अपने उत्पादों पर निम्न विवरण के अनुसार कोड संकेतों का उल्लेख करें-

प्लास्टिक प्रदूषण को हराया

विश्व पर्यावरण दिवस 2018 की थीम 'बीट प्लास्टिक प्रदूषण', हमारे समय की महान पर्यावरणीय चुनौतियों में से एक का मुकाबला करने के लिए हम सभी के लिए एक कार्रवाई के लिए एक काल है। इस वर्ष के मेजबान भारत द्वारा चुना गया, विश्व पर्यावरण दिवस 2018 का विषय हम सभी को यह विचार करने के लिए आमंत्रित करता है कि हम अपने प्राकृतिक स्थानों, अपने वन्यजीवों और अपने स्वयं के स्वास्थ्य पर प्लास्टिक प्रदूषण के भारी बोझ को कम करने के लिए अपने रोजमर्रा के जीवन में बदलाव कैसे कर सकते हैं।

जबकि प्लास्टिक के कई मूल्यवान उपयोग हैं, हम गंभीर पर्यावरणीय परिणामों के साथ एकल उपयोग या डिस्पोजेबल प्लास्टिक पर निर्भर हो गए हैं। दुनिया भर में, हर मिनट में 1 मिलियन प्लास्टिक पीने की बोतलें खरीदी जाती हैं। हर साल हम 5 ट्रिलियन डिस्पोजेबल प्लास्टिक बैग का उपयोग करते हैं। कुल मिलाकर, हम जो प्लास्टिक इस्तेमाल करते हैं, उसका 50 फीसदी सिंगल यूज है।

प्लास्टिक के प्रकार एवं सामान्य उपयोग

- **पॉलीएथाइलिन टेरफ्थालेट (पी.ई.टी.):** शामिल पेय पदार्थों, पेयजल, खाद्य तेलों, शराब, सौन्दर्य प्रसाधनों की बोतलें तथा औषधियों की पैकिंग में प्रयुक्त पारदर्शी सफेद अथवा रंगीन बोतलें
 - **हाई डेन्सिटी पॉलीएथाइलिन (एच.डी.पी.ई.):** यह अर्द्धपारदर्शी अथवा अपारदर्शी होती है तथा मोड़ने पर टूटती नहीं। कड़े प्रकार के कंटेनर, थैले, दूध अथवा जूस के जग, डिटर्जेंट की बोतलों तथा मोटर आयल के डिब्बों के निर्माण में इसका प्रयोग अधिक किया जाता है।
 - **पॉली विनाइल क्लोराइड (पी.वी.सी.):** यह रंगहीन, सफेद पन्नी होती है जिसे शैम्पू, मिनरल वाटर, शराब, घरेलू रसायनों आदि की बोतलों पर एक फिल्म की तरह से चढ़ा कर पैकिंग की जाती है।
 - **लो डेन्सिटी पॉलीएथाइलिन (एल.डी.पी.ई.):** यह लचीली, चिकनी एवं मुलायम होती है तथा इसे खाद्य सामग्री, ड्राइक्लीनर्स बैग, कूड़ा के थैलों, आईस्क्रीम ट्यूब आदि में प्रयोग में लाया जाता है।
 - **पॉलीप्रापीलीन (पी.पी.):** यह पारदर्शक, साफ एवं अपारदर्शी, कठोर अथवा मुलायम सभी प्रकार की हो सकती है। दूध के डिब्बों, बोतलों के ढक्कनों आदि में इसका उपयोग किया जाता है।
 - **पॉलीस्टीरीन (पी.एस.):** यह लचीली होती है परन्तु अधिक मोड़ने पर टूट जाती है। मांस ट्रे, अंडों के डिब्बों, काफी कप तथा पारदर्शी कैंडी के पैकिंग हेतु इनका उपयोग किया जाता है।
 - **मिश्रित प्लास्टिक:** इसमें प्लास्टिक के कई प्रकार कसे घटक मिश्रित होते हैं जो उपयोग के अनुसार निर्धारित होते हैं। इनसे चटनी तथा अन्य सामग्री आदि की दबाकर निकालने योग्य बोतलें आदि बनाई जाती हैं।
- भारत में इन कोड संख्याओं को चिन्हित किये जाने की परम्परा का कठोरता से पालन नहीं किया जाता जिसके परिणामस्वरूप रीसाइक्लिंग के दृष्टिकोण से प्लास्टिक की छँटाई किया जाना कठिन हो जाता है।

प्लास्टिक की वैश्विक खपत

एक अनुमान के मुताबिक इस समय समूचे विश्व में लगभग 1500000000 टन प्लास्टिक का उपयोग किया जा रहा है, जो

कि हर गुजरते दिन के साथ बढ़ता ही जा रहा है। वैसे तो प्लास्टिक के उत्पादों एवं उपयोग क्षेत्र की फेहरिस्त बहुत लंबी-चौड़ी है, तथापि इसकी व्यापक को समझने के लिये यहाँ संक्षेप में इसके कुछ प्रमुख उपयोगों के बारे में बताया जा रहा है-

- सभी प्रकार के कैरीबैक के निर्माण में।
- पानी की टैंकियों, पाइपों तथा अन्य नल सम्बन्धी अन्य उपकरणों के निर्माण।
- मिनरल पाटर, पेय पदार्थों, दूध, बिस्टिक, खाद्य तेल, अनाज आदि खाद्य सामग्री की पैकिंग में।
- दैनिक उपयोग की वस्तुओं जैसे दूध ब्रश, दूधपेस्ट ट्यूब, शैम्पू बॉटल, चश्मे तथा कंघी आदि में।
- दवाइयों तथा उनके डिब्बों, रक्त भण्डारण थैलों, तरल ग्लूकोज आदि में।
- विभिन्न आकार में ढाले गये फर्नीचरों जैसे-मेज, कुर्सी, अलमारी, दरवाजे इत्यादि में।
- वाहनों, हवाई जहाजों तथा अन्य उपकरणों के हिस्सों के निर्माण में।
- इलेक्ट्रिक सामग्री, इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों, टेलीविजन, रेडियो, कम्प्यूटर तथा टेलीफोन आदि के निर्माण में।
- कृषि में उत्पादन की मात्रा को बढ़ाने के लिये मृदा से जल के वाष्पोत्सर्जन को रोकने हेतु आच्छादित की जाने वाली कृत्रिम घास आदि के निर्माण में
- खिलौनों, डापर, क्रेडिट कार्ड आदि में। यहाँ यह जान लेना जरूरी होगा कि वैश्विक स्तर पर न्यूनतम प्रति व्यक्ति प्लास्टिक का उपयोग जहाँ 18.0 किलोग्राम है, वहीं इसके रीसाइकिलिंग की दर 15.2% है। ठोस अपशिष्ट में वैश्विक स्तर पर प्लास्टिक के अंश 7.0% तक पाये जाते हैं।

प्लास्टिक जनित समस्याएँ

उक्त फेहरिस्त से प्लास्टिक की उपादेयता का तो पता चलता है, किन्तु प्लास्टिक जनित क्या-क्या समस्याएँ हमारे सामने आ रही हैं, यह भी जान लेना जरूरी है। इन्हीं समस्याओं ने प्लास्टिक प्रदूषण की समस्या को बढ़ाया है। तो आइये इन पर नजर डालते हैं-

- प्लास्टिक नैसर्गिक रूप से विघटित होने वाला पदार्थ नहीं है। एक बार निर्मित हो जाने के बाद यह प्रकृति में स्थाई

तौर पर बना रहता है और प्रकृति में इसे नष्ट कर सकने में सक्षम किसी सूक्ष्म जीवाणु के अस्तित्व के अभाव में यह कभी भी नष्ट नहीं होता। अतः इसके कारण गंभीर पारिस्थितिकीय असंतुलन तथा पर्यावरण में प्रदूषण फैलता है।

- इसके घुलनशील अथवा प्राकृतिक रूप से विघटित न हो सकने के कारण यह नालों एवं नदियों में जमा हो जाता है जिससे जलप्रवाह के अवरूद्ध होने के कारण जलभराव की समस्या उत्पन्न हो जाती है तथा साथ ही स्वास्थ्य सम्बन्धी सफाई आदि की समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं।
- जाम हो चुके सीवर के ठहरे हुये पानी में मच्छरों के पैदा होने से मच्छरजनित रोग जैसे मलेरिया, डेंगू आदि फैलना आरंभ हो जाता है।
- समुद्री पर्यावरण में प्लास्टिक का कचरा फेंके जाने से सामुद्रिक पारिस्थितिकी को हानि पहुँचती है। समुद्री जीव इनका उपभोग कर लेते हैं जिनके परिणामस्वरूप उनकी मृत्यु हो जाती है।
- प्लास्टिक उद्योग में कार्यरत श्रमिकों के स्वास्थ्य पर इनका बुरा प्रभाव पड़ता है और उनके फेफड़े, किडनी तथा स्नायुतंत्र दुष्प्रभावित होते हैं।
- निम्न गुणवत्तायुक्त प्लास्टिक पैकिंग सामग्री पैक किये जाने वाले भोजन एवं औषधियों के साथ रसायनिक प्रतिक्रिया करके उन्हें दूषित एवं खराब कर सकती है जिससे उपयोगकर्ताओं हेतु खतरा उत्पन्न हो जाता है।
- प्लास्टिक को जलाये जाने से निकलने वाली विषाक्त गैसों के परिणामस्वरूप गंभीर वायु प्रदूषण की समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।
- प्लास्टिक प्रदूषण की भयावह तस्वीर को समझने के लिये यह जान लेना जरूरी होगा कि वर्तमान समय में पूरी पृथ्वी पर लगभग 1500 लाख टन प्लास्टिक एकत्रित हो चुका है, जो पर्यावरण को क्षति पहुँचा रहा है। अकेले अमेरिका में लगभग 4 करोड़ से भी अधिक प्लास्टिक की बोतलें या तो गड्डों में दबाई जाती हैं अथवा इन्हें कचरे के ढेरों में फेंक दिया है। वर्ष 2004 तक पूरे विश्व में लगभग 3150 लाख कम्प्यूटर प्रयोग से बाहर होने के कारण कबाड़ में तब्दील हो चुके थे, जिनसे 20 लाख टन प्लास्टिक कचरा उत्पन्न हो चुका था। वर्ष 2013 तक स्थिति क्या बन रही है, यह

इस आंकड़े के आधार पर समझा जा सकता है। प्लास्टिक प्रदूषण समूचे जीवमण्डल को किस प्रकार प्रभावित कर रहा है, यह निम्न विवरण से स्पष्ट हो जायेगा।

वन्यजीवन को खतरा

प्लास्टिक प्रदूषण से उत्पन्न खतरों में धरती पर रहने वाले पशुओं की अपेक्षा समुद्री जीव जन्तु अधिक बड़े खतरे से घिरे हुये हैं। समुद्री जीव जन्तु समुद्र में फेंकी गई प्लास्टिक की वस्तुओं में उलझ कर फंस जाते हैं और मारे जाते हैं। इसके अलावा यदि वे गलती से प्लास्टिक को भोजन के रूप में खा लेते हैं तो भी इससे उनकी मृत्यु हो जाती है। समुद्री जीवों में सबसे अधिक दुष्प्रभावित होने वाले प्रमुख जीव इस प्रकार हैं—

- **कछुएँ:** समुद्र में पाये जाने वाले सभी प्रकार के कछुए आज अनेक कारणोंवश संकटग्रस्त प्रजातियों में गिने जाते हैं। इन कारणों में से एक प्रमुख कारण प्लास्टिक की समस्या है। कछुए अधिकतर मछली पकड़ने वाले जाल में फंस जाते हैं। इसके अलावा कई मृत कछुओं के पेट से प्लास्टिक के थैले भी पाये गये हैं। ऐसा अनुमान है कि पूर्ण पारदर्शी पतली प्लास्टिक के ये थैले जब समुद्र में फेंक दिये जाते हैं तो समुद्री जल में ये 'जेली फिश' जैसे प्रतीत होने लगते हैं जिसके धोखे में कछुये इनका भोजन कर लेते हैं। इस प्रकार प्लास्टिक को खा लिये जाने से उनका श्वसन तंत्र अवरूद्ध हो जाता है और वे मर जाते हैं। हवाई द्वीप में एक मृत कछुएँ के पेट से प्लास्टिक थैले के अनेक टुकड़े निकाले गये थे।
- **स्तनपाई:** हाल ही की एक अमेरिकी रिपोर्ट के अनुसार प्रत्येक वर्ष लगभग 1 लाख समुद्री स्तनपाई प्लास्टिक तथा प्लास्टिक के जाल में फंसने एवं उसे खा लेने के परिणामस्वरूप मर जाते हैं। जब सील मछली किसी प्लास्टिक का कोई बड़ा टुकड़ा खा लेती है तो ये डूबने अथवा भूख के कारण मर जाती है। इसी प्रकार अनेक अन्य स्तनपाई प्लास्टिक से लगने वाले घावों, रक्त प्रवाह, दम घुटने एवं भूख से मर जाते हैं।
- **समुद्री पक्षी:** आज तक पूरे विश्व में समुद्री पक्षियों की लगभग 75 प्रजातियाँ प्लास्टिक को खाने के लिये जानी जाती हैं। हाल कसे ही एक अध्ययन के अनुसार दक्षिण अफ्रीका के मैरियन आइसलैण्ड में ब्लू पीटरेल चिक्स नामक पक्षियों का परीक्षण किया गया और उनमें से 90%

के पेट में प्लास्टिक के अवशेष पाये गये। पक्षियों के पेट में पहुँचाने वाला प्लास्टिक कभी हजम नहीं होता है। यह उनकी पाचन क्रिया को दुष्प्रभावित करता है, फलतः उनकी मौत हो जाती है।

प्लास्टिक निस्तारण से जुड़ी समस्याएँ

प्लास्टिक कचरे का निस्तारण एक दुश्वासी भरा काम है। वैश्विक स्तर पर इसके निस्तारण की दो विधियाँ ही प्रचलित हैं पहली विधि के अंतर्गत इसे जला दिया जाता है तथा दूसरी विधि के अंतर्गत से जमीन में गड्ढे खोदकर गाड़ दिया जाता है। इन दोनों ही विधियों की अलग-अलग समस्याएँ हैं, जिनके बारे में यहां जान लेना उचित होगा। ये समस्याएँ निम्नांकित हैं—

- प्लास्टिक को जलाए जाने से इससे डाइऑक्सीन नामक अत्यन्त विषैली गैस निकलती है जो पर्यावरण में लंबे समय तक बनी रह जाने वाली होती है तथा मनुष्यों एवं पशुओं के शरीर में उनके श्वास के साथ प्रवेश करके वसा तंतुओं में एकत्रित हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप कैंसर, शारीरिक कुविकास एवं अन्य रोग एवं समस्याएँ उत्पन्न हो जाती है।
- प्लास्टिक को गड्ढों में गाड़ दिए जाने से पर्यावरण को हानि पहुँचती है। ऐसा सिद्ध हो चुका है कि अभी तक पर्यावरण में कोई भी ऐसा सूक्ष्म जीवाणु उपलब्ध नहीं है जो प्लास्टिक का विघटन करने में सक्षम हो, अतः यह कभी भी नष्ट नहीं होती तथा सदैव वातावरण में बनी रहती है। इसके परिणामस्वरूप मृदा के अनुपजाऊ होने, पारिस्थितिक असंतुलन, पानी के विषाक्त होने जैसी समस्याएँ उत्पन्न होने लगती है।
- कुछ विकसित देशों में आजकल पैथालेट्स नाम से ज्ञात प्लास्टिक गलाने वाले माध्यम का उपयोग प्लास्टिक को गड्ढों में भरते समय किया जाने लगा है। ये पैथालेट्स भूगर्भीय जल को विषाक्त कर सकते हैं। अनुसंधान से यह पता चला है कि ये पैथालेट्स महिलाओं के हारमोन एस्ट्रोजेन की नकल तैयार कर सकते हैं तथा पुरुषों में नपुंसकता, कन्याओं में शीघ्र यौवन का विकास तथा जन्मजात विकारों जैसे पुरुषों के विकृत प्रजनन अंगों जैसी समस्याएँ उत्पन्न कर सकते हैं।

उल्लेखनीय है कि कुछ विकसित राष्ट्र आज जैविक रूप से विघटित होनेवाले प्लास्टिक की खोज कर रहे हैं। दुश्चारी यह

है कि इसकी उत्पादन लागत इतनी अधिक है कि आर्थिक दृष्टि से यह अनुपयोगी है। साथ ही यह शत-प्रतिशत प्रदूषण मुक्त भी नहीं है। यानी पूर्णतः सुरक्षित नहीं है। आजकल प्लास्टिक प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए कागज, कपड़े तथा जूट आदि के बने थैलों के इस्तेमाल पर जोर दिया जा रहा है। आर्थिक दृष्टि से यह भी महंगा पड़ता है। इसके आर्थिक पहलू से जुड़े कुछ तथ्यों को रेखांकित करना आवश्यक है। कागज, कपड़े या जूट का प्रयोग करने पर जहां पैकेजिंग का वजन 300% तक बढ़ जाता है, वहीं अपशिष्ट का परिमाण 160% तक बढ़ जाता है। जहां ऊर्जा की आवश्यकता 110% तक बढ़ जाती है, वहीं पैकेजिंग की लागत भी 210% तक बढ़ जाती है। इस प्रकार हम पाते हैं कि प्लास्टिक का कोई ऐसा किफायती विकल्प नजर नहीं आता, जो पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल हो।

रीसाइकिल प्लास्टिक से जुड़ी समस्याएं

एक तो प्लास्टिक की रीसाइकिलिंग को सुरक्षित नहीं माना जाता है, दूसरे इससे जुड़ी समस्याएं भी कम नहीं हैं। वर्तमान समय में हम जितनी भी प्लास्टिक का उपयोग कर रहे हैं, उसमें से ज्यादातर रीसाइकिल की गई प्लास्टिक ही होती है, जिसे बाजार के अनुरूप बनाने के लिए इसमें अनेक प्रकार के पदार्थों, रंगों तथा रसायनों का मिश्रण किया जाता है। इस प्रकार ऐसी प्लास्टिक कभी भी विशुद्ध प्लास्टिक नहीं रह जाती। इसके अलावा सरकार भी ऐसी प्लास्टिक सामग्री के निर्माताओं पर ऐसी कोई बाध्यता नहीं लगाती जिससे वे इनमें उपयोग किए गए पदार्थों की सार्वजनिक घोषणा करें। परिणामस्वरूप हमें छूटाई में कभी भी एक समान प्लास्टिक नहीं मिल सकती। विभिन्न प्लास्टिक वस्तुओं में से कुछ विशुद्ध तथा कुछ रिसाइकिल किए गए प्लास्टिक से बनाई गई होती हैं। इसके अलावा बार-बार प्लास्टिक को रिसाइकिल किए जाने से ये बेकार और गुणवत्ताहीन हो जाती हैं जिनके अपने दुष्प्रभाव होते हैं। इनमें से कुछ दुष्प्रभाव इस प्रकार हैं।

- रिसाइकिल किए गए प्लास्टिक दोने विशुद्ध पॉलीमर नहीं उपलब्ध करा सकते।
- ऐसे प्लास्टिक के दोने स्वास्थ्य सम्बन्धी खतरों को ध्यान में रखे बिना ही उपयोग में लाए जाते हैं।

- रिसाइकिल की गई एक ही प्रकार की प्लास्टिक को निम्न प्रकार के उपभोक्ता सामग्री के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है।

रिसाइकिल किए गए पॉलीमर से निर्मित पर्यावरण की दृष्टि से उपयोगी वस्तुएं-

- इन्जेक्शन मोल्डेड बेकरी ट्रे, कालीन, वस्त्रों एवं कपड़े के धागे।
- लांड्री सामग्री, मोबिल आयल के लिए डिब्बे, ढाले गए टब तथा कृषि हेतु पाइप इत्यादि।
- खेल के मैदान के विभिन्न उपकरण, फिल्म तथा हवा भरने योग्य सामग्री।
- थैले तथा कम्पोस्ट के डिब्बे।
- आटोमोबाइल पार्ट्स, कालीन, बैटरी के खोल, कपड़े तथा पैकिंग फिल्म इत्यादि।
- कार्यालय सामग्री, वीडियो कैसेट आदि।

रिसाइकिल से मिश्रित प्लास्टिक के द्वारा विभिन्न प्रकार की उपभोक्ता सामग्री बनाई जा सकती है जिनमें से प्रमुख हैं-

- पार्कों की बंच एवं मेज।
- घरेलू तथा कार्यालय फर्नीचर।
- कचरे के डिब्बे।
- बगीचे की बाड़ तथा जल भरने के स्थान से जल को रोकने के लिए बाड़।
- जेटी के निर्माण,
- गाड़ियों के रोकने के संकेत।
- रफ्तार अवरोधक
- जूते, ब्रशों के दस्ते इत्यादि।

प्लास्टिक के विकल्प

साधारण प्लास्टिक का सर्वोत्तम विकल्प प्राकृतिक रूप से विघटित होने योग्य थैले होते हैं। ऐसे थैले 3 से 6 महीनों में अपने आप ही प्राकृतिक रूप से नष्ट हो जाते हैं। ऐसे थैलों में स्टार्च के पॉलीमर, सूक्ष्म धागों से निर्मित थैले इत्यादि प्रमुख होते हैं। इनका एक अतिविक्रि लाभ यह होता है कि ये बिना अधिक ऊर्जा के उपयोग के बनाए जा सकते हैं। तथा इनसे किसी प्रकार की ग्रीनहाउस गैसों भी नहीं निकलती। यद्यपि आर्थिक दृष्टिकोण से ये थोड़े महंगे अवश्य पड़ते हैं परन्तु पर्यावरण की रक्षा के दृष्टिकोण से ये अत्यन्त उपयोगी होते हैं। हालांकि प्राकृतिक रूप से विघटित हो सकते योग्य कुछ ऐसे थैले भी होते हैं जो समुद्र

में 6 महीनों से अधिक टिके रह सकते हैं और समुद्री जीवों को मार सकते हैं। इसके अलावा ऐसे थैले गद्दों में भी तब तक पूरी तरह से विघटित नहीं होते जब तक इन्हें निरंतर रूप से पलटा न जाता रहे। ऑस्ट्रेलिया की सरकार ने ऐसे प्राकृतिक रूप से विघटित हो सकने योग्य थैलों के निर्माण के मानक निर्धारित किए हैं जिन्हें एक निश्चित अवधि में कम्पोस्ट में परिवर्तित किया जा सके। कुछ वैकल्पिक थैलों के प्रकार निम्नवत् हैं जो निकट भविष्य में बाजार में उपलब्ध हो सकते हैं—

- **स्टार्च बैग:** इनमें उच्च क्षमतायुक्त पॉलीमर के साथ 10 से 90 प्रतिशत तक स्टार्च मिलाया गया हो सकता है। इनके विघटन काल की निर्भरता इनमें मिलाए गए स्टार्च की मात्रा पर निर्भर करती है। यदि इनमें 60% से अधिक स्टार्च मिलाया गया है तो ये सहजतापूर्वक धुल जाते हैं। शतप्रतिशत मकई के स्टार्च से निर्मित बैग जिनमें लचीलापन बनाए रखने के लिए वनस्पति तेलों को मिश्रित किया जाता है, 10 दिन से एक माह में जल अथवा मिट्टी में विघटित हो जाते हैं। यदि इन्हें पशुओं द्वारा खा भी लिया जाता है तो पशु आसानी से इन्हें पचा सकते हैं।
- **ग्रीन बैग:** ये पॉलीप्रापीलीन रेशों के द्वारा निर्मित होते हैं। इन बैगों में प्लास्टिक थैलों की अपेक्षा अधिक समाना ढोया जा सकता है और ये बार-बार उपयोग में भी लाए जा सकते हैं। ग्रीन बैग को गद्दों में नहीं फेंका जाना चाहिए और न ही इन्हें समुद्र में फेंकना चाहिए क्योंकि ये आसानी से नष्ट नहीं होते। परंतु ये जेली फिश के समान प्रतीत न होने के कारण ये समुद्री जीवों को अधिक हानि नहीं पहुँचाते।
- **कैलिको बैग:** ये बैग कपास से बने होते हैं तथा बार-बार उपयोग में लाए जा सकते हैं तथा प्लास्टिक बैग की अपेक्षा अधिक वजन उठाए जाने के योग्य होते हैं। ये गद्दों में आसानी से विघटित नहीं होते तथा समुद्र में ये एक दिन में डूब जाते हैं तथा समुद्र में तैरते नहीं हैं।

प्लास्टिक समस्या का भारतीय परिदृश्य (The Indian Scenario of Plastic Problem)

अन्य देशों की तरह भारत में भी प्लास्टिक प्रदूषण की समस्या भयावह और विकराल है। यहां की रोजमर्रा की जिंदगी में प्लास्टिक की खपत दिन-ब-दिन बढ़ रही है। आंकड़ों से पता चलता है कि भारत में जहां न्यूनतम प्रतिव्यक्ति प्लास्टिक का

उपयोग 2.4 किलोग्राम है, वहीं सर्वाधिक प्लास्टिक रीसाइक्लिंग का प्रतिशत 60 है। ठोस अपशिष्ट में (Plastic in Solid Waste) प्लास्टिक के अंश 0.5 से 4% तक पाए जाते हैं। भारत में गरीबी, प्रबंधन के अभाव तथा अपर्याप्त सफाई सुविधाओं के कारण जहां यह समस्या और विकराल हुई है, वहीं इसके दुष्परिणाम भी सामने आ रहे हैं। प्लास्टिक प्रदूषण के कारण शहरों में सीवेज व्यवस्था ठप पड़ जाती है। नाले-नालियाँ अवरूद्ध होने से गंदे पानी की कृत्रिम बाढ़ जा जाती है। गंदगी फैलने से मच्छर बढ़ते हैं, जो डेंगू और मलेरिया जैसी प्राण घातक बीमारियों का कारण बनते हैं। पॉलीथिन बैगों को खाकर गायें व आवारा पशु मर जाते हैं।

प्लास्टिक प्रदूषण के दुष्प्रभावों एवं घातक परिणामों को लेकर भारत सरकार खासी गंभीर है, यही कारण है कि सरकार द्वारा 20 माइक्रान की मोटाई से कम तथा "8×12" ऊंचाई के प्लास्टिक कैंरी बैगों पर पूरे देश में प्रतिबंध लगा दिया गया है। राज्यवार भी प्लास्टिक प्रदूषण को कम करने के प्रयास किए जा रहे हैं। वनों अभ्यारण्यों, प्राणी उद्यानों, पर्यटन स्थलों तथा राष्ट्रीय धरोहरों आदि क्षेत्रों में प्लास्टिक के बैगों, पॉलीथिन आदि को प्रतिबंधित किया जा रहा है।

भारत में प्लास्टिक कचरे के प्रबंधन के उपाय व समस्या समाधान:-

- फेंकी गई प्लास्टिक की रीसाइक्लिंग की जानी चाहिए।
- प्रत्येक मनुष्य को पैकेजिंग के काम में लाई और फेंक दी जाने वाली प्लास्टिक के उपयोग में यथासंभव कमी लानी चाहिए।
- ऐसे उत्पादों को खरीदना चाहिए जिनकी पैकेजिंग में कम से कम प्लास्टिक का उपयोग किया गया हो तथा ग्राहकों को अपने निजी कपड़े के बैग आदि का उपयोग
- किसी भी प्रकार के प्लास्टिक के पदार्थ को सीवर, नदियों के किनारे अथवा समुद्र के आसपास नहीं फेंका जाना चाहिए।
- प्रत्येक शहर के नगर निगम अधिकारियों का यह कर्तव्य होना चाहिए कि वे प्राकृतिक रूप से विघटित होने तथा न हो सकने योग्य कूड़े के लिए अलग-अलग कूड़ेदानों की व्यवस्था करें। इस प्रकार एकत्रित की गई समस्त प्लास्टिक को रीसाइक्लिंग के लिए भेजा जाना चाहिए।
- जनसाधारण में प्लास्टिक से उत्पन्न खतरों के प्रति सघन जागरूकता अभियान चलाया जाना चाहिए जिसे स्कूल

- स्तर से प्रारंभ कर समस्त बाजारों एवं कार्यालयों में कार्यरत जनता तक प्रचारित एवं प्रसारित किया जाना चाहिए। नागरिकों में अपने शहर एवं देश के पर्यावरण की रक्षा के उत्तरदायित्वों का प्रचार किया जाना चाहिए।
- परिवार के प्रत्येक सदस्य को प्राकृतिक रूप से विघटित हो सकने योग्य तथा विघटित न हो सकने योग्य अलग-अलग कूड़ेदान के उपयोग के विषय में शिक्षित किया जाना चाहिए। जिससे कचरे को सही तरीके से छाँटने में सहायता प्राप्त हो सके।
 - पेट्रोकेमिकल औद्योगिक इकाईयों तथा प्लास्टिक वस्तुओं के समस्त प्रमुख निर्माताओं को अपने उत्पादों में प्रयुक्त प्लास्टिक के रिसाइक्लिंग के तरीकों को आम जनता को सूचित करने हेतु बाध्य किया जाना चाहिए।
 - समस्त प्रकार के रिसाइक्लिंग एवं ठोस अपशिष्ट निस्तारण परियोजनाओं के सफल संचालन हेतु बैंकों तथा अन्य सरकारी संस्थाओं को आगे आकर अधिक से अधिक सहायता उपलब्ध करानी चाहिए।
 - समयानुसार एवं निरंतर आधार पर तथा विशेष रूप से मानसून के मौसम के पहले सीवर तथा नालों की समुचित सफाई की जानी चाहिए।
 - वस्तुतः प्लास्टिक जिस तरह से हमारी रोजमर्रा की जिंदगी में शामिल हो चुका है, उसे देखते हुए इसे एकदम से तो जीवन से निकाला नहीं जा सकता, किंतु समझदारी भरे उपाय कर इस समस्या को एक सीमा तक नियंत्रित अवश्य किया जा सकता है। इसके लिए हमें तीन कदम मजबूती से बढ़ाने होंगे। पहला कदम यह होना चाहिए कि हम प्लास्टिक के उपयोग को न्यूनतम स्तर पर लाएं और इसके उपयोग में कमी लाएं। दूसरा कदम हमें प्लास्टिक के सामानों के पुनः इस्तेमाल की ओर बढ़ना होगा। यानी इन्हें कचरे में फेंकने के बजाय घरेलू कामों में हम इनका पुनर्उपयोग करें। तीसरा कदम है पुनचक्रण (Recycling) जिसके बारे में पहले ही काफी कुछ बताया जा चुका है।
 - प्लास्टिक निर्माण में प्रयुक्त कच्चे माल को तैयार माल में परिवर्तित करने में ऊर्जा की खपत बहुत कम मात्रा में होती है।
 - कागज के थैलों के निर्माण में प्रयुक्त ऊर्जा के मुकाबले प्लास्टिक थैलों के निर्माण में मात्र 1/3 ऊर्जा ही व्यय होती है।
 - प्लास्टिक के विभिन्न प्रकार के उपयोगों से बनाए गए उपकरणों की सहायता से होने वाली कार्यक्षमता में वृद्धि के कारण लगभग 530 करोड़ यूनिट बिजली की बचत होती है।
 - प्लास्टिक से बने हुए बोरे, जूट अथवा कागज के बोरों की तुलना में बड़ी मात्रा में पैकिंग करने से 40% कम ऊर्जा की खपत करते हैं।
 - घरों में दूध पहुँचाते में प्रयुक्त प्लास्टिक बैग शीशे की बोतलों की तुलना में मात्र 1/10 हिस्सा ही ऊर्जा का उपयोग करते हैं।
 - जलापूर्ति करने वाले लोहे के पाइपों की तुलना में पी.वी. सी. पाइप उनके निर्माण में अधिक उपयोगी एवं ऊर्जा की बचत करने वाले होते हैं।
 - प्लास्टिक के कुछ अनोखे गुण जैसे रगड़ प्रतिरोधक, रासायन प्रतिरोधक, कम रखरखाव लागत तथा टिकाऊपन आदि होते हैं। इनकी देखभाल करना अन्य धातुओं अथवा पदार्थों की तुलना में सहज एवं सरल होता है।
 - सन् 1992 में किए गए एक अध्ययन से यह पता चला है कि शीशे, कागज अथवा धातुओं के स्थान पर प्लास्टिक का पैकिंग में उपयोग किए जाने के कारण अमेरिका में 336 ट्रिलियन यूनिट ऊर्जा बचाई गई। यह मात्रा लगभग 580 लाख बैरल तेल अथवा 3250 क्यूबिक फिट प्राकृतिक गैस अथवा 32 करोड़ पाउंड कोयले के बराबर होती है।

कीटनाशक प्रदूषण

क्या हैं प्लास्टिक के फायदे (What are the Advantages of using Plastic)

प्लास्टिक को एकदम से नकारा नहीं जा सकता अनेक खूबियां भी हैं, जो फायदेमंद हैं। हम इन्हें यहां प्रस्तुत कर रहे हैं।

विश्व की विशाल जनसंख्या के भोजन की मांग को पूरा करने के लिए बड़े पैमाने पर खाद्यान्न उत्पादन की आवश्यकता है परन्तु इसमें एक बड़ी चुनौती कीटों द्वारा बड़े पैमाने पर फसलों का नष्ट किया जाना है। एक अनुमान के अनुसार विश्व में उत्पादित की जाने वाली कुल फसल का लगभग 1/3 भाग कीटों द्वारा नष्ट कर दिया जाता है। ऐसे में इन कीटों पर नियंत्रण करने का सर्वाधिक

सुलभ एवं लोकप्रिय तरीका जहरीले रसायनों, जिसे कीटनाशक कहा जाता है, का प्रयोग किया जाना है। परंतु चिंता का विषय यह है कि कीटनाशक भले ही कीटों से तत्कालीन निजात दिला देते हों परंतु इनके दीर्घकालिक उपयोग के कारण पर्यावरण पर अनेक प्रकार के हानिकारक प्रभाव भी सामने आ रहे हैं।

कीटनाशकों के प्रकार (Types of Pesticides)

कृषि कार्यों में प्रयोग में आने वाले कीट नाशकों को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है।

1. अकार्बनिक कीटनाशक (Inorganic Pesticides):

सोडियम फ्लोराइड, सोडियम फ्लोसिलिकेट, साइरोलाइट, लाइम सल्फर आदि प्रमुख अकार्बनिक कीटनाशक हैं। यद्यपि इनका प्रयोग लंबे समय से हो रहा है। परंतु लंबे समय तक प्रकृति में बने रहने तथा कीटों के अलावा अन्य जीव-जंतुओं एवं मनुष्यों पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों के कारण इनका उपयोग कम होने लगा है।

2. कार्बनिक कीटनाशक (Organic Pesticides):

कार्बनिक कीटनाशक अधिक प्रभावी, प्रकृति में कम समय तक बने रहने वाले (Less Persistent) तथा मात्र अपने निर्देशित लक्ष्य को ही प्रभावित करते हैं। इसीलिए इनकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही है। ऐसे कीटनाशकों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है।

(i) प्राकृतिक कीटनाशक (Natural Pesticides):

ये पौधों पशुओं अथवा अन्य सूक्ष्म जीवाणुओं से उत्पन्न हुई हो सकती हैं, उदाहरणार्थ विभिन्न प्रकार के आवश्यक तेल जैसे-

- वानस्पतिक (Botanical)- निकोटीन ($C_{10}H_{14}N_2$) पाइरेथ्रिन रोटेनोन ($C_{23}H_{22}O_6$) इत्यादि तथा
- सूक्ष्म जीवाणु (Microbial)- जैसे बी.टी., सी.पी.वी. इत्यादि।

(ii) कृत्रिम कार्बनिक कीटनाशक (Synthetic Organic Pesticides):

ये कीटनाशक आधुनिक हैं तथा विभिन्न प्रकार के कीटों के विरुद्ध तेजी से और बड़ी मात्रा में प्रभाव डालते हैं। इनके आण्विक संगठन के अनुसार इन्हें प्रमुख रूप से 5 भागों में विभाजित किया जा सकता है-

(1) क्लोरीनेटेड हाइड्रोकार्बन, (2) आर्गेनो फास्फोरस यौगिक, (3) कार्बामेट, (4) कृत्रिम पाइरेथ्राइड्स तथा (5) आई.जी.आर.।

1. **क्लोरीनेटेड हाइड्रोकार्बन:** इस कीटनाशक के सर्वाधिक प्रचलित उदाहरण हैं- डी.डी.टी., मेथाऑक्सीक्लोर, बी.एच.सी., एल्लिडिन, डाइएल्लिडिन, हेफ्टाक्लोर, एंड्रिन इत्यादि। रासायनिक रूप से ये सभी कीटनाशक अत्यधिक स्थिर एवं स्थाई प्रकृति के हैं। एक बार इनका छिड़काव कर दिए जाने के बाद ये प्राकृतिक रूप से विघटित होकर समाप्त नहीं होते। प्रयोग यह बताते हैं कि एक बार इन रसायनों का उपयोग प्राकृतिक क्षेत्रों में कर दिए जाने के बाद ये भोजन शृंखला में प्रवेश कर जाते हैं तथा वसा की कोशिकाओं में एकत्रित हो जाते हैं। जब ऐसी वसा को ऊर्जा उत्पादन हेतु ऑक्सीकरण किया जाता है तो ये मानव रक्त में मिल जाते हैं और अपने विषैले प्रभावों को प्रदर्शित करते हैं।

क्लोरीनेटेड हाइड्रोकार्बन के दुष्प्रभाव

पशुओं पर दुष्प्रभाव: डीडीटी तथा इसके जैसे अन्य यौगिकों के पक्षियों के प्राकृतिक आवास के समीप छिड़काव किए जाने के परिणामस्वरूप बहुत बड़ी संख्या में पक्षियों एवं स्तनपाइयों के मारे जाने की घटनाएं सामने आती रहती हैं। इनके दुष्प्रभावों के कारण पक्षियों के चूजे मर जाते हैं। इसके अतिरिक्त ये कीटनाशक भोजन के माध्यम से पक्षियों के शरीर में प्रवेश पा जाते हैं। सारस, बगुला तथा जल कौवे जैसे पक्षियों तथा उनके अंडों के खोलों पर इन कीटनाशकों के गंभीर दुष्प्रभावों को विभिन्न परीक्षणों में दर्ज किया गया है। इन खोलों के कैल्सियम में आर्गेनोक्लोरीन यौगिकों के जमाव पाए गए हैं। इन रासायनिक क्रियाओं के परिणामस्वरूप ये खोल कमजोर हो जाते हैं तथा अंडों में से बच्चों के पोषित होकर बाहर निकाल पाने के पूर्व ही अंडे फूट जाते हैं।

मृदा पर प्रभाव: भूमि अथवा मृदा के एक वर्ग मीटर क्षेत्र में लगभग 9 लाख प्रकार के कशेरुका विहीन (बिना रीढ़ की हड्डी वाले) जीव निवास करते हैं। ये जहवी मृदा को उपजाऊ शक्ति प्रदान करते हैं। ऐसे जीवों में शामिल हैं- कोलेम्बोला, माइट, सिम्फिलिड, केंचुआ आदि। कीटनाशकों के प्रयोग से ये जीव समाप्त हो जाते हैं जिससे भूमि अनुपजाऊ हो जाती है। साथ ही नाइट्रोजन को संशोधित करने वाले जीवाणु भी मर जाते हैं। जिसके परिणामस्वरूप मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा कम हो जाती है तथा पौधों का विकास रूक जाता है।

2. **आर्गेनोफास्फोरस यौगिक (Organophosphorus Compound):** इसमें से प्रमुख पैराथियान तथा मैलाथियान आदि बहुत अधिक प्रसिद्ध हैं। यद्यपि ये स्थाई प्रकृति के नहीं होते तथा उपयोग के पश्चात सहजतापूर्वक विघटित हो जाते हैं। परन्तु ये स्नायु प्रेरित संचरण पर हमला करते हैं। ये रसायन कोलीन एस्टीरेज एंजाइमों की गतिविधियों को रोक देते हैं जिसके कारण स्नायु प्रभाव निरंतर रूप से जारी रहता है जो सामान्य जीवन प्रणाली को अवरोधित करता है। इन यौगिकों के भारी प्रयोग से मनुष्यों में विभिन्न प्रकार की स्नायुविक बीमारियाँ देखी जा रही हैं। क्लोरोसिस जैसी बीमारियाँ एवं पौधों में अनियमित एवं बाधित विकास जैसी समस्याएँ सामने आ रही हैं।
3. **कार्बामेट्स (Carbamates):** घरेलू तथा कृषि कीटों के नियंत्रण में इनका प्रयोग होता है। इनमें से सबसे अधिक प्रसिद्ध यौगिकों में कार्बारिल, कार्बोफुरान, प्रापाक्सर (बेगान), आल्डीकार्ब, मेथीकार्ब (मेसुरल) इत्यादि हैं। ये सस्ते एवं प्रभावी कीटनाशक हैं। परन्तु ये गंभीर पर्यावरणीय असंतुलन पैदा करते हैं तथा मधुमक्खियों, बरें तथा ततैया आदि कीटों को नष्ट कर देते हैं।
4. **कृत्रिम पाइथ्रेथ्रिड्स:** ये चुनिंदा कीटों के प्रति ही प्रभावी होते हैं तथा सूर्य के प्रकाश में आसानी से विघटित हो जाते हैं।
5. **कीट विकास नियामक (Insect Growth Regulators IGRs):** इनका निर्माण विभिन्न आण्विक घटकों से मिलकर होता है। ये किसी भी कीट के जीवनचक्र के विभिन्न पहलुओं पर प्रभाव डालते हुये उनके जीवन चक्र को पूरा होने से रोक देते हैं और इस प्रकार उनकी जनसंख्या की वृद्धि को नियंत्रित करते हैं। ऐसे रसायनों में प्रमुख हैं मेथेप्रिन (आल्टोसिड), डाइफ्लूबेन्जोरॉन (डिमलिन), किनोप्रिन (यूस्टर) आदि। इन रसायनों को प्रमुख रूप से कीटनाशक, फफूंदनाशक, शाकनाशक अथवा व्यापक प्रभाव वाले जैवनाशकों के रूप में जाना जाता है।
- **फफूंद नाशक (Fungicides):** ऐसे यौगिक आरगैनो फास्फोरस यौगिकों की अपेक्षा कम जहरीले होते हैं परन्तु जिनमें पारा एवं तांबे का घटकों के रूप में उपयोग किया गया हो, अत्यधिक विषैले हो जाते हैं तथा स्थाई प्रकृति के होते हैं। विभिन्न प्रकार के स्वपोषित जीव इनके द्वारा नष्ट हो जाते हैं। इन रसायनों को अत्यधिक उपयोग मृदा की उपजाऊ शक्ति को भी कम करता है।
- **शाक नाशक (Herbicides):** इनके प्रयोग से बड़ी संख्या में पशुओं की मृत्यु होती है। क्योंकि पशुओं एवं अन्य जीवों द्वारा पत्तों एवं शाकों के उपभोग किये जाने पर इनके दुष्प्रभाव इन पर पड़ते हैं। सिमाजीन नामक शाक नाशक के उपयोग से बहुत बड़ी मात्रा में लाभदायक कीट, उनके अंडे, केंचुए इत्यादि के नष्ट होने की जानकारी मिलती है।
- कीट नाशकों के दुष्प्रभाव**
 - **लंबे समय तक वायुमंडल से बने रहना:** इससे पर्यावरण पर गंभीर दुष्प्रभाव पड़ते हैं। ये अत्यंत मंद गति से डी०डी०डी० तथा डी०डी०ई० में विघटित होते हैं जो मूल डी०डी०टी० की तुलना में और अधिक विषैले होते हैं। अतः एक बार इनका प्रयोग किये जाने के बाद डी०डी०टी० का विषैला प्रभाव दिनों-दिन बढ़ता ही जाता है।
 - **जैव आवर्धन (Biomagnification):** अधिकांश कीटनाशक सहजता से न तो नष्ट होते हैं और न ही पशुओं के द्वारा पचाये जा सकते हैं अतः ये पशुओं के शरीर की कोशिकाओं में एकत्रित हो जाते हैं और इनकी सान्द्रता धीरे-धीरे बढ़ती जाती है। सान्द्रता की प्रक्रिया उच्च पोषण स्तर पर और अधिक तीव्र हो जाती है। इस प्रकार कीटनाशकों के बहुत अधिक खतरनाक स्तर प्राप्त कर लेने के बाद उच्च पोषण स्तर के पशुओं के मरने एवं नष्ट हो जाने का खतरा उत्पन्न कर देती है जिससे जैव आवर्धन की प्रक्रिया दुष्प्रभावित होती है।
 - **प्रतिरोधक क्षमता का विकास:** निरंतर प्रयोग के कारण कीटों में इन कीटनाशकों के प्रति प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती जाती है जिससे कीटनाशकों की मात्रा और बढ़ाते जाते हैं जो घातक हो जाता है।
 - **गैरलक्षित प्रजातियों का उन्मूलन (Elimination of Non-Target Species):** इनके प्रयोग से ऐसी प्रजातियाँ

एवं जीव भी नष्ट हो जाते हैं जो लाभदायी होते हैं। इससे प्राकृतिक परजीवियों के समूल नष्ट होने एवं पारिस्थितिकीय असंतुलन का खतरा पैदा हो जाता है।

- **कीटों का जैविक नियंत्रण (Biological Control of Pests):** कीटों की संख्या को जैविक नियंत्रण एक ऐसी प्रक्रिया जिसके अन्तर्गत कीटों की संख्या को प्रकृति में उपस्थित इनके प्राकृतिक परभक्षियों एवं परजीवियों के द्वारा नियंत्रित किया जाता है। इससे पर्यावरण को हानि नहीं पहुंचाता। विश्व में जैविक नियंत्रण के अनेकों सफल एवं उत्साहवर्धक उदाहरण सामने आ चुके हैं जो जैविक नियंत्रण में निहित अपार संभावनाओं की ओर इशारा करते हैं।

- **जैविक नियंत्रण के लाभ (Advantages of Biological Control)**

- जैविक नियंत्रण माध्यम के मात्र एक बार क्रियाशील कर दिये जाने के बाद यह स्वयं गतिशील रहता है तथा नये कीटों को नष्ट कर देता है।
- एक छोटे क्षेत्र में ऐसे जैविक नियंत्रण माध्यमों को स्थापित करके बड़े क्षेत्र में कीटों पर नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है।
- मात्र लक्षित प्रजातियों को ही जैविक नियंत्रण माध्यमों के द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। ऐसे माध्यम अन्य प्रजातियों के लिये किसी प्रकार का खतरा उत्पन्न नहीं करते।
- इनका किसी प्रकार का कोई विषैला दुष्प्रभाव नहीं होता।
- यह विधि अत्यंत सस्ती एवं दीर्घकालिक परिणाम प्रदान करने वाली है।

- **जैविक नियंत्रण के प्रति सावधानियां (Precautions of Biological Control)**

- किसी भी जैविक नियंत्रण माध्यम को किसी भी खेत अथवा क्षेत्र में लागू किये जाने से पूर्व यह सुनिश्चित कर लिया जाना चाहिये कि ऐसे माध्यम मात्र लक्षित प्रजाति वाले कीटों को ही अपना शिकार बनाएं।
- जैविक नियंत्रण माध्यमों का खेतों में वास्तविक उपयोग में लाये जाने के पूर्व प्रयोगशाला अथवा अन्य उपयुक्त स्थानों पर भली-भांति परीक्षण कर लिया जाना चाहिये। यह निश्चित किया जाना भी अनिवार्य

होता है कि ऐसे माध्यमों से कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं को किसी प्रकार की हानि न पहुंचने पाये क्योंकि एक बार यदि ये प्राकृतिक शत्रु नष्ट हो जाते हैं तो कीटों का नियंत्रण करना अत्यंत कठिन हो सकता है।

- जिस परभक्षी को सक्रिय किया जाये उनका समुचित निरीक्षण करते रहना भी अत्यंत अनिवार्य होता है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि वे सुरक्षा की जाने वाली फसल के अतिरिक्त अन्य प्रकार की फसलों के लिये स्वयं ही कीट न बन जाये।
- जिस पर्यावरण में ऐसे जैविक कीटनाशक माध्यमों को सक्रिय किया जाना है वह इनकी उत्तरजीविता एवं बहुगुणित होने हेतु अनुकूल होना चाहिये।

- **सूक्ष्म जीवाणु माध्यमों से कीटों का जैविक नियंत्रण (Biological Control of Insects Through Microbial Agents):** अधिकांश रोग उत्पादक जीवाणु विशिष्ट प्रजातियों से संबंध रखते हैं और मनुष्यों हेतु किसी प्रकार का खतरा उत्पन्न नहीं करते हैं। इनमें प्रोटोजोआ, वायरस, बैक्टीरिया तथा फुंगी आदि विभिन्न श्रेणियों के रोग उत्पादक अवयव सम्मिलित होते हैं।

- वायरस- न्यूक्लियर पॉली वायरस, साइटो प्लास्मिक पॉली वायरस तथा एंटोमोपॉक्स इत्यादि।
- बैक्टीरिया- बेसिलियस थुरिंजियनेसिस, स्ट्रेप्टोमाइसिस अवेरमिटालिस इत्यादि।
- प्रोटोजोआ - नोसेमा यूओक्यूस्टे।
- फुंगी- व्यूवेरिया बैसियाना, मेड्रीरिझियम एस.पी. इत्यादि।

- **एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीएम):** ऐसी प्रक्रिया जिसमें कीटों के जीव विज्ञान तथा पर्यावरण में उनके प्राकृतिक नियामक कारकों के ज्ञान के द्वारा समस्त संभावित कीट नियंत्रणों को एकीकृत किया जाता है, एकीकृत कीट प्रबंधन कहलाती है। इसमें विभिन्न प्रकार के कीटनाशक उपायों जैसे रासायनिक, जैविक, सांस्कृतिक, व्यवहारिक, पर्यावरण परिवर्तन तथा प्रतिरोधक किस्मों के विकास आदि की प्रणालियों को सम्मिलित किया जाता है।

- **एकीकृत कीट प्रबंधन के महत्वपूर्ण पहलू**

- किसी भी कीटनाशक के चयन के पूर्व अत्यधिक सतर्कता की आवश्यकता होती है जिससे यह किसी भी कृषि व्यवस्था को व्यापक तौर पर दुष्प्रभाव न कर सके।

- किसी भी एकीकृत नियंत्रण उपाय को अपनाए जाने से पूर्व कीटों के जीवविज्ञान का गहन अध्ययन किया जाना अनिवार्य होता है। इससे कीट नियंत्रण की लागत एवं समय को बचाया जा सकता है।
- जैविक नियंत्रण एकीकृत कीट प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण अंग है। कीटों पर नियंत्रण करने हेतु जैविक नियंत्रण प्रणालियों को यथासंभव अपनाया जाना चाहिए।
- विभिन्न प्रकार की कीट प्रतिरोधी फसलों को विकसित किया जाना चाहिए।
- फसल चक्रानुक्रमण को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए जिससे फसल विशेष को नष्ट करने वाले कीट पनप न सकें।
- वन पानी और मिट्टी जैसे महत्वपूर्ण संसाधनों की सुरक्षा और संरक्षण (Conservation) करते हैं। भूमि क्षरण रोकते हैं। भू-सतही जल का रोककर उन्हें स्वच्छ कर भूमिगत जल भेजते हैं तथा जमीन की नमी को बनाये रखते हैं।
- अनेक पशु-पक्षी और जीव-जन्तुओं का ये आश्रय-स्थल होते हैं। शेर जैसे वन्य जीव को आश्रय देकर पर्यावरण संतुलन की भूमिका निर्वाह करने में सहायक बनते हैं।
- वनों से औषधियां प्राप्त होती हैं। जिससे अनेक अस्वस्थ लोगों का उपचार संभव है।
- जल-चक्र तथा वायु-चक्र में प्रमुख भूमिका निभाते हैं।
- मनोरंजन स्थल के रूप में विकसित कर इन्हें आय का साधन बनाया जा सकता है।
- गोंद, लाख, कत्था, शहद, रबड़, मोम और न जाने कितने प्रकार की गौण उपज वनों से प्राप्त होती है।
- कई प्रकार के कुटीर उद्योगों को कच्चा माल उपलब्ध कराते हैं। जैसे-बेंत का फर्नीचर, खिलौने आदि।
- वन भूमि की उर्वरकता को बढ़ाते हैं। वृक्षों से भूमि पर गिरने वाली पत्तियां आदि सड़-गल मिट्टी में मिल जाती है। इससे मिट्टी को जीवाश्म की प्रप्ति होती है।
- उद्योगों से होने वाले प्रदूषण को रोकते हैं। घनी वृक्षावली कई प्रकार की विषैली गैसों का अवशोषण करती है। वृक्ष ध्वनि प्रदूषण को भी कम करते हैं।
- उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि वन किसी भी राष्ट्र की जीवन रेखा (Life Line) हैं क्योंकि राष्ट्र विशेष के समाज की समृद्धि तथा कल्याण उस देश की स्वस्थ एवं समृद्ध वन संपदा पर प्रत्यक्ष रूप से आधारित होता है। वन प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र के जैविक संघटकों में से एक महत्वपूर्ण संघटक है तथा पर्यावरण की स्थिरता तथा पारिस्थितिकीय संतुलन उस क्षेत्र की वन संपदा की दशा पर आधारित होता है।

वनोन्मूलन

पर्यावरण की दृष्टि से वन पेड़ पौधे और वनस्पति से आच्छादित वे क्षेत्र हैं जो वायुमंडल की कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित करते हैं और प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया से वापस ऑक्सीजन देकर वायुमंडल को संतुलित रखते हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार मानव विकास के पूर्व ही वनों का विकास हो गया था प्रारंभिक अवस्था में पृथ्वी लगभग 25 प्रतिशत भाग इन वनों से ढका था पृथ्वी पर वन संसाधन भू-पारिस्थितिकी के सबसे प्रमुख उदाहरण हैं। मानव ने इन वन संसाधनों का उपयोग कई रूपों में किया है तथा इसके साथ सामंजस्य भी कई रूपों में स्थापित किया है। इसी कारण वन मानव के पालन गृह रहे हैं।

- वनों का प्रयोग केवल लकड़ी की ईंधन या कच्चे माल के रूप में प्रयोग करने तक सीमित नहीं है बल्कि इनके अनेक पर्यावरणीय एवं भौगोलिक महत्व हैं।
- ये ऑक्सीजन (प्राण वायु) के संचित कोष स्थल हैं। जो कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित कर ऑक्सीजन देते हैं। अप्रत्यक्ष रूप से विश्वतापन रोकने में इनकी महती भूमिका है।
- वन आच्छादित क्षेत्र वायुमंडल की आर्द्रता बनाये रखते हैं जिससे अधिक वर्षा की संभावना रहती है।
- ये नदियों के प्रवाह को नियमित करते हैं, उनके प्रदूषण को नियंत्रित करते हैं, मिट्टी को बहकर जाने से रोकते हैं, बाढ़ रोकते हैं या कम करते हैं।

वनोन्मूलन या वन विनाश (Deforestation)

- यह चिंता का विषय है कि वर्तमान आर्थिक मानव ने प्राकृतिक वनस्पतियों के पर्यावरणीय एवं पारिस्थितिकीय